# समाधि मृत्यु

-: लेखक-संपादक :-
पूज्य आचार्यदेव श्रीमद् विजय
रत्नसेनसूरीश्वरजी म.सा.

# समाधि-मृत्यु

## • लेखक-संपादक •

जैन शासन के महान् ज्योतिर्धर, परम शासन प्रभावक
पूज्यपाद आचार्यदेव श्रीमद् विजय **रामचंद्रसूरीश्वरजी** म.सा.
के बीसवीं सदी के महान् योगी, निःस्पृह शिरोमणि
पूज्यपाद पंन्यास प्रवर श्री **भद्रंकरविजयजी** गणिवर्य
के चरम शिष्यरत्न मरुधर रत्न, प्रवचन प्रभावक,
हिन्दी साहित्यकार पूज्य आचार्यदेव श्रीमद्
**विजय रत्नसेनसूरीश्वरजी म.सा.**

**195**


**प्रकाशक**

**दिव्य सन्देश प्रकाशन**

C/o. सुरेन्द्र जैन, 205, सोना चेंबर्स,
507-509, जे.अेस.अेस. रोड, चीरा बाजार,
सोनापुर गली के सामने, मरीन लाईंस (E), मुंबई-400 002.
**M. 8484848451, Mobile : 9892069330**

आवृत्ति : **द्वितीय** • मूल्य : **80/-** रुपये • प्रतियां-**1000** • दि. **15-8-2020**
विमोचन स्थल : **श्री मुनिसुव्रत स्वामी नवग्रह जैन मंदिर, कोंडितोप, चैन्नइ**

## आजीवन सदस्य योजना

**आजीवन सदस्यता शुल्क - 3000/- रु.**

- आप जैन धर्म के रहस्य-जैन इतिहास-जैन तत्त्वज्ञान-जैन आचार मार्ग, प्रेरणादायी कथाएँ आदि का अध्ययन करना चाहते हों तो आज ही आप दिव्य संदेश प्रकाशन मुम्बई की आजीवन सदस्यता प्राप्त कर लें। सदस्य बनते ही अध्यात्मयोगी निःस्पृह शिरोमणि स्व. **पूज्यपाद पंन्यासप्रवर श्री भद्रंकरविजयजी गणिवर्यश्री** एवं उन्हीं के चरम शिष्यरत्न प्रवचन प्रभावक **परम पूज्य आचार्यदेव श्रीमद् विजय रत्नसेनसूरीश्वरजी म. सा.** द्वारा लिखित उपलब्ध **10 पुस्तकें दी जाएगी** और अर्हद् दिव्य संदेश मासिक तथा भविष्य में हिन्दी भाषा में प्रकाशित पुस्तकें घर बैठे प्राप्त होंगी। आप आजीवन सदस्यता शुल्क मुंबई या बैंगलोर के पते पर दिव्य संदेश प्रकाशन-मुंबई के नाम से चैक व ड्राफ्ट से भेजें।

## प्राप्ति स्थान

**1. चेतन हसमुखलालजी मेहता**
भायंदर (M.S.)
M. 9867058940

**2. प्रवीण गुरुजी,**
C/o. श्री आत्म कमल लब्धिसूरि जैन पुस्तकालय
श्री आदिनाथ जैन टेंपल,
चिकपेठ, बेंगलोर-560 053.
M. 9036810930

**3. राहुल वैद,**
**C/o. अरिहंत मेटल कं.,**
4403, लोटन जाट गली,
पहाड़ी धीरज, सदर बाजार,
दिल्ली-110 006.
M. 9810353108

**4. चंदन एजेन्सी**
मुंबई, M. 9820303451

***आजीवन सदस्यता शुल्क***
***Rs. 3000/- भिजवाने का पता एवं पुस्तक-प्राप्ति-स्थान :***
**(1) दिव्य संदेश प्रकाशन**
**C/o. सुरेन्द्र जैन,** 205, सोना चेंबर्स, 507-509, जे.अेस.अेस. रोड, चीरा बाजार, सोनापुर गली के सामने, मरीन लाईंस (E), मुंबई-400 002. **M. 9892069330**

# प्रकाशक की कलम से....

बीसवी सदी के महान योगी, नमस्कार महामंत्र के अजोड साधक **निःस्पृह शिरोमणि पूज्यपाद पंन्यास प्रवर श्री भद्रंकरविजयजी गणिवर्य** के कृपापात्र चरम शिष्यरत्न मरुधररत्न, **गोडवाड के गौरव, हिन्दी साहित्यकार एवं प्रवचनकार पूज्य आचार्यदेव श्रीमद् विजय रत्नसेनसूरीश्वरजी म.सा.** द्वारा हिन्दी भाषा में आलेखित **195 वीं पुस्तक 'समाधि-मृत्यु'** की द्वितीय आवृत्ति का प्रकाशन करते हुए हमें अत्यंत ही हर्ष हो रहा है ।

अपने संयम जीवन के 40 वर्षों में पूज्य आचार्यश्री ने भारत के चार राज्यों में ही लगभग 40000 कि.मी. का पाद विहार किया है ।

25 जनवरी 2017 की मंगल वेला में पूज्य आचार्य श्री ने 5 वें कर्णाटक राज्य में प्रवेश किया था !

कर्णाटक में प्रवेश के बाद उनकी तारक निश्रा में अनेक विध शुभ अनुष्ठानों की हारमाला चल रही हैं, तो उसके साथ ही उनकी शांत-प्रशांत गंगा के प्रवाह की भांति बहती प्रवचन गंगा में दक्षिण भारत में बसनेवाली मूल राजस्थानी प्रजा भी आत्म-स्नान कर अपनी आत्मा को निर्मल बना रहे हैं ।

उसके बाद उन्होंने बेंगलोर, मैसूर व कोयम्बत्तूर में चातुर्मास कर प्रवचन की वर्षा की ! उसके बाद अब उनकी प्रवचन वर्षा चैन्नई की धन्यधरा पर बरस रही है ।

हमें आत्म विश्वास है कि पूज्यश्री के द्वारा आलेखित अन्य प्रकाशनों की भांति प्रस्तुत प्रकाशन भी अत्यंत ही उपकारक सिद्ध होगा ।

# लेखक की कलम से....

जन्म समय की भयंकर वेदना को हम सभी ने सहन किया हैं, परंतु उस वेदना की स्मृति हमें नहीं है । जीवन में रोग-प्रतिकूलताएं आदि भी आई हैं, परंतु उस वेदना में चित्त की प्रसन्नता या समाधि भाव रखना आसान काम नहीं है । इसलिए तो लोगस्स सूत्र के माध्यम से परमात्मा के पास **'समाहिवरमुत्तमं दिंतु'** मुझे श्रेष्ठ समाधि की प्राप्ति हो, ऐसी मांग की जाती है ।

मरण समय में भी 'समाधि' की प्राप्ति हो, इस हेतु **प्रार्थनासूत्र जयवीयराय** के माध्यम से परमात्मा के आगे **'समाहि मरणं च बोहिलाभो अ'** कहकर समाधि मृत्यु की प्रार्थना की जाती है ।

जन्म के साथ मौत तो जुडी हुई है, उस मौत से तो बचा नहीं जा सकता हैं, **परंतु समाधि द्वारा उस मौत को अवश्य सुधारा जा सकता है ।**

अनंतकाल में अनंत भवों में अनंतीबार अपनी आत्मा ने बालमरण अर्थात् असमाधि मरण को प्राप्त किया है । बस, इस भव में तो हमें समाधि मरण ही पाना है और उसी के लिए योग्य पुरुषार्थ करना है ।

**आयुष्य का बंध एक ही बार :** जीवन में सात कर्मों का बंध तो सतत चालू है, परंतु आयुष्य कर्म का बंध जीवन में एक ही बार होता है । आयुष्य के बंध से आत्मा अपने अगले भव का आयुष्य निचित करती है ।

सामान्यतया वर्तमान जीवन के दो तिहाई (2/3) भाग बीतने पर आयुष्य बंध होता है । यदि उस समय आयुष्य का बंध न हो तो बाकी रहे आयुष्य के दो तृतीयांश भाग बीतने पर आयुष्य का बंध होता है । अंत में मृत्यु के पूर्व अवश्य आयुष्य का बंध होता है ।

आयुष्य का बंध बिना किसी भी जीव की मृत्यु नहीं होती है ।

आयुष्य का बंध जीवन में एक ही बार होता हैं, सद्गति या दुर्गति, जो भी आयुष्य का बंध पडा हो उसमें पुनः परिवर्तन नहीं होता है ।

**आयुष्य बंध की क्षणें मूल्यवान् है :** जीवन भर धर्म-आराधना की हो, परंतु आयुष्य बंध के समय आत्मा अशुभ भाव में रहे तो दुर्गति के ही आयुष्य का बंध होता है तो इसके साथ ही जीवन भर पाप प्रवृत्ति की हो परंतु आयुष्य बंध के समय जीव शुभ भाव से भावित हो जाय तो आत्मा की सद्गति हुए बिना नहीं रहती है ।

मृत्यु समय में समाधि भाव रह सके या अपने परिचित अन्य किसी को समाधि प्रदान कर सके, इसी पवित्र भावना से भूतकाल में हुए अनेक महापुरुषों के वचनामृतों का पान कर इस छोटीसी कृति का आलेखन-संकलन किया है ।

प्रस्तुत पुस्तक के संकलन में **'भव्यत्व परिपाक के उपाय में दुष्कृत-गर्हा'** और सुकृत अनुमोदना के मेटर में **सा. श्री अध्यात्मरेखाश्रीजी** का भी सहयोग रहा है ।

प्रस्तुत कृति का स्वाध्याय कर किसी एक आत्मा को भी समाधि भाव की प्राप्ति हो गई तो मेरा किया हुआ श्रम सफल व सार्थक हुए बिना नहीं रहेगा ।

जैन सुंदेशा मुथा भवन
श्रावण पूर्णिमा,
वि.सं. 2076,
दि. 3-8-2020

अध्यात्मयोगी पूज्यपाद
**गुरुदेव पंन्यास प्रवर श्री भद्रंकरविजयजी गणिवर्य**
कृपाकांक्षी
**आचार्य रत्नसेनसूरि**

# अनुक्रमणिका


| क्रम | विषय | पृष्ट संख्या |
|---|---|---|
| 1. | समाधि मरण के 10 उपाय | 7 |
| 2. | समाधि मृत्यु के अनमोल सूत्र | 20 |
| 3. | पंच सूत्र प्रथम सूत्र भावानुवाद | 51 |
| 4. | भव्यत्व परिपाक के उपाय | 68 |
| 5. | मुमुक्षु और मिच्छा मि दुक्कडम् | 69 |
| 6. | मिच्छा मि दुक्कडम् | 70 |
| 7. | सुकृत अनुमोदना | 84 |
| 8. | समाधि-प्रेरक गीत | 94 |
| 9. | मैत्री भाव का पावन झरना | 95 |
| 10. | उठ-उठ रे म्हारा ज्ञानी रहे जीवड़ा | 95 |
| 11. | मिलता है सच्चा सुख केवल | 96 |
| 12. | जब प्राण तन से निकले | 97 |
| 13. | उठ जाग मुसाफिर भोर भई | 98 |
| 14. | भक्ति कराता छूटे म्हारो प्राण | 98 |
| 15. | जिह्वा पर हो नाम तुम्हारा..। | 100 |
| 16. | ऐसी कृपा हो भगवन | 100 |
| 17. | अब सौंप दिया इस जीवन का | 101 |
| 18. | जब प्राण तन से निकले | 102 |
| 19. | जब प्राण तन से निकले | 103 |
| 20. | अमृतवेल की सज्झाय | 104 |
| 21. | पुण्य प्रकाश का स्तवन | 107 |
| 22. | पुण्य प्रकाश का हिन्दी अनुवाद | 120 |

## 1 समाधि मरण के 10 उपाय

पूर्वाचार्य महर्षि ने मृत्यु को समाधिमय बनाने के लिए प्राकृत भाषा में 12000 श्लोक प्रमाण **'संवेगरंग शाला'** नाम के ग्रंथ का निर्माण किया है ।

भक्त परिज्ञा, आउरपच्चक्खाण, चउ सरण पयन्ना आदि अनेक पयन्नाओं में समाधि मृत्यु के उपाय बतलाए है ।

**'मृत्यु को मृत्यु-महोत्सव (समाधि मृत्यु) में ट्रांसफर करने के लिए हमें क्या-क्या करना चाहिए ?' महोपाध्याय श्रीमद् विनय विजयजी म.** ने पुण्य प्रकाश-स्तवन के अन्तर्गत समाधि-मृत्यु के 10 सूत्र बतलाए हैं ।

1. समाधि का प्रथम सूत्र है-**अतिचार आलोचना** अर्थात् स्वकृत पाप का स्वीकार ।

जीवन में जो भी व्रत स्वीकार किये हो, उन व्रतों में जाने अनजाने में कोई अतिचार-दोष लगा हो, उन अतिचारों की गुरु समक्ष आलोचना करनी चाहिये । उन पापों का अवश्य प्रायश्चित्त करना चाहिये ।

जब तक छद्मस्थ अवस्था है, तब तक भूलों की संभावना है ।

आनंद श्रावक को हुए अवधिज्ञान के क्षेत्र के विषय में चार ज्ञान के धारक, गणधर गौतम स्वामी भी भूल में पड़ गये थे...और इसी कारण प्रभु की आज्ञा से अपनी भूल सुधारने के लिए गौतम स्वामीजी ने आनंद श्रावक को **'मिच्छा मि दुक्कड़म्'** दिया था ।

◆ सूरिपुरंदर श्रीमद् हरिभद्रसूरिजी म. भी बौद्धों के दुर्व्यवहार से रुष्ट होकर वाद में हुई शर्त के अनुसार बौद्धों की हत्या के लिए उतारु हो चुके थे...परन्तु समयज्ञ गुरुदेव ने उन्हें अवसरोचित सफल मार्गदर्शन देकर इस पाप से बचा दिया था...और हरिभद्रसूरिजी म. की आँखों से पश्चात्ताप के आँसू निकल पड़े थे। पश्चात्ताप के आँसुओं द्वारा उन्होंने अपने पाप पंक का प्रक्षालन कर लिया था।

शास्त्रकार महर्षियों का कथन है-`जिसके दिल में जीवन में हुए पापों के प्रति पश्चात्ताप का भाव जगा हो और सद्गुरु के चरणों में जाकर जो अपने पाप की आलोचना करता हो, वह व्यक्ति भी धन्यवाद का पात्र है।

सद्गुरु के चरणों में जाकर अपने जीवन में हुए समस्त पापों का स्वीकार वही व्यक्ति कर सकता है जिसके दिल में पाप के प्रति तिरस्कार भाव जगा है।

समाधि मृत्यु के इच्छुक व्यक्ति को अपने जीवन में हुए समस्त पापों को हृदय से स्वीकार करना चाहिए और सद्गुरु के पास उनकी आलोचना लेनी चाहिए। पाप की आलोचना करने से व्यक्ति पाप के भार से हल्का हो जाता है।

पाप की आलोचना करते समय इस लोक और परलोक में, अनजान में अथवा जानबूझकर हुए समस्त पापों को याद कर **'मिच्छामि दुक्कडम्'** देना चाहिए।

2. समाधि मृत्यु का दूसरा सूत्र है-**'व्रतों का स्वीकार'**

(पाप नहीं करने का दृढ़ संकल्प) **व्रत धरिए गुरुसाख,** गुरु साक्षी में व्रतों को स्वीकार करना ।

मानव-भव दुर्लभ है और प्रशंसनीय है, क्योंकि एक मात्र इसी भव में पापत्याग की संपूर्ण प्रतिज्ञा का स्वीकार किया जा सकता है ।

देव व नारक भव में पाप के प्रति धिक्कार भाव पैदा हो सकता है, किंतु पाप त्याग की प्रतिज्ञा नहीं । तिर्यंच के भव में भूख व पराधीनता के दुःख के कारण सद्धर्म का श्रवण व श्रद्धा ही दुर्लभ है, फिर भी पूर्व के पुण्योदय, जातिस्मरण ज्ञान व सद्गुरु-परमगुरु का योग मिल जाय तो आंशिक पाप त्याग की प्रतिज्ञा संभव है, परन्तु सर्वथा पाप त्याग की प्रतिज्ञा का स्वीकार तो एक मात्र मानव भव में ही संभव है ।

पाप त्याग की प्रतिज्ञा के अनेक फायदे हैं :-

1. विरति के परिणाम में आयुष्य का बंध हो तो अवश्य वैमानिक देवलोक की ही प्राप्ति होती है ।

2. दुनिया में ऐसे बहुत से पाप हैं जिनके आचरण की न तो हमें आवश्यकता होती है और न ही उन्हें करना पड़ता है, फिर भी पापत्याग की प्रतिज्ञा नहीं होने से हमारी आत्मा उन समस्त पापों का बंध करती रहती है ।

3. प्रतिज्ञा का स्वीकार करने से पापत्याग की मनोवृत्ति के स्वीकार से हम भावी कर्मबंध से बच जाते हैं, क्योंकि प्रतिज्ञा के अभाव में, पाप नहीं करने पर भी पाप का बंध होता रहता है ।

समाधि मृत्यु के लिए अपने जीवन को अधिक-से-अधिक संयमी और विरतियुक्त बनाने का प्रयत्न करते रहना चाहिए । कम-से-कम जीवन की अंतिम वेला में सजाग अवस्था में अधिक-से-अधिक पापों के त्याग की प्रतिज्ञा का स्वीकार करना चाहिए ।

3. समाधि मृत्यु का तीसरा सूत्र है–**सर्व जीव क्षमापना** और **सर्व जीवों के साथ मैत्री का स्वीकार ।**

इस विराट् विश्व में मुख्यतया दो तत्त्व हैं-जड़ और चेतन ।

जहाँ चैतन्य है वहीं सुख-दुःख का अनुभव है, और जहां चैतन्य का अभाव है, वहाँ सुख-दुःख की अनुभूति का भी अभाव है ।

जड़ पदार्थ पर शासन करना सरल है, क्योंकि उसमें बोध-संवेदन का अभाव होने से प्रतिकारक शक्ति नहीं है, जबकि चैतन्य पदार्थ में ज्ञान-सुख-दुःख का संवेदन होने से प्रतिकारक शक्ति रही हुई है ।

जब तक एक भी जीवात्मा के प्रति आत्मा में द्वेष भाव रहा होगा, तब तक आत्मा का मोक्ष संभव नहीं है अर्थात् एक जीव के प्रति रहा हुआ द्वेष-भाव भी हमारे भावी मोक्ष को स्थगित करने में सक्षम है ।

जीवों के प्रति रहा द्वेष-भाव हमारे समाधि भाव को खंड़ित कर देता है...अतः समाधि के इच्छुक व्यक्ति को अपने जीवन में समस्त जीवों के प्रति रहे वैर भाव को विसर्जित कर मैत्री के संबंध को स्थापित करना होगा ।

**मैत्री तो धर्म का मूल है । मूल के अभाव में वृक्ष का अस्तित्व संभव नहीं है, उसी प्रकार मैत्री के अभाव में जीवन में धर्म का अस्तित्व संभव नहीं है । मैत्री की नींव पर ही जीवन में सद्धर्म की स्थापना हो सकती है ।**

मैत्री की परिभाषा है-**'परहितचिन्ता मैत्री' ।** दूसरे के हित का विचार करना मैत्री भावना है । यह मैत्री भावना जगत् के समस्त जीवों के प्रति होनी चाहिए । एक भी जीवात्मा के प्रति अहित का विचार करने से हमारी मैत्री भावना खंड़ित हो जाती है और मन संक्लेशग्रस्त बन जाता है । अतः मन की शुद्धि के लिए सर्व जीव विषयक मैत्री भावना को अपने जीवन में जीवंत रखना चाहिए ।

मृत्यु की वेला में विशेषकर अपने मन को मैत्री भावना से भावित करना चाहिए ।

4. समाधि मृत्यु का चोथा सूत्र है– **अठारह पापस्थानों को वोसिराना ।**

हिंसा, झूठ, चोरी, मैथुन, परिग्रह, क्रोध, मान, माया, लोभ, राग, द्वेष, कलह, अभ्याख्यान, पैशुन्य, रति-अरति, पर-परिवाद (निंदा), माया-मृषावाद और मिथ्यात्व ये अठारह पापस्थानक कहलाते हैं । इनके सेवन से आत्मा अशुभ-कर्म का बंध करती है और उसके परिणामस्वरुप आत्मा को दुर्गति में भटकना पड़ता है ।

अज्ञानता और मोह के वशीभूत होकर जीवन में इन अठारह पापस्थानकों का सेवन किया हो तो मन वचन और काया

तथा करण, करावण और अनुमोदन से इन पापस्थानकों को वोसिराना चाहिए ।

**एक मात्र साधु जीवन ही निष्पाप जीवन है । पंच महाव्रतधारी साधु महात्मा को अपने जीवनयापन के लिए किसी भी प्रकार का मन, वचन और काया से पापाचरण करना नहीं पड़ता है, जबकि गृहस्थ जीवन में तो कदम-कदम पर पापों का आसेवन रहा हुआ है ।**

`आग में प्रवेश करना और जलना नहीं अथवा कोयले से भरे गोदाम में प्रवेश करना और बेदाग रहना, जिस प्रकार असंभव है, उसी प्रकार गृहस्थ जीवन में रहकर निष्पाप रहना असंभव है । गृहस्थ जीवन में सतत कुछ न कुछ पाप होता ही रहता है । उन पापों से मुक्त बनने के लिए और निष्पाप श्रमण जीवन को अंगीकार करने की पवित्र भावना से उन पापों को वोसिराना चाहिए ।'

पापों के प्रति रहा ममत्व भाव भी पापबंध का कारण है, अतः उन्हें सच्चे दिल से अवश्य वोसिराना चाहिए ।

5. समाधि मृत्यु का पाँचवाँ सूत्र है–**चतुः शरण गमन ।**

अज्ञानता और मोह के कारण संसारी व्यक्ति धन, पुत्र, परिवार और सत्ता आदि में अपनी सुरक्षा समझता है और इसी कारण वह धन की वृद्धि के लिए तनतोड़ मेहनत करता रहता है । वह यही समझता है कि यदि उसके पास में करोड़ों की संपत्ति होगी तो वह सुरक्षित हो जाएगा...उसे किसी प्रकार का भय नहीं रहेगा ।

दुनिया में कई लोग यह कहते सुने जाते हैं कि ``मेरे पास में इतनी संपत्ति है...इतनी जमीन है...इतनी जायदाद है...इतने बंगले हैं...इतनी मोटर कारे हैं...इतने नौकर-चाकर हैं...इतना बड़ा विशाल परिवार है अतः अब किस बात की कमी है...मैं पूर्णतया सुरक्षित-निर्भय हूँ, क्योंकि मेरी सेवा में अनेक नौकर हाजिर हैं, मेरे आदेश का पालन करने के लिए अनेक आज्ञांकित सेवक हैं ।''

परंतु अशुभ कर्म के उदय से ऐसे व्यक्तियों के जीवन में जब अचानक ही भयंकर आपत्ति आ गिरती है, व्यापार में नुकसान हो जाने से भयंकर आर्थिक संकट आ गिरता है...अचानक शरीर भयंकर रोगों का घर बन जाता है...अचानक पेढ़ी का मुनीम भयंकर घोटाला कर देता है...अचानक भयंकर एक्सीड़ेंट हो जाता है और उसके कारण हाथ-पैर आदि कट जाते हैं...तब यह सत्य सामने आता है कि वास्तव में इस जगत् में मेरा कौन है ?

आर्थिक संकट मे जब कोई सहायता करने वाला नहीं मिलता है, जब इकलौता बेटा भी अपनी पत्नी का गुलाम बनकर अलग हो जाता है, भूकंप आदि की दुर्घटना से व्यापार साफ हो जाता है, तब पता चलता है कि इस जगत् में मेरी रक्षा करने वाला कोई नहीं है । तभी यह जगत् और इस जगत् के बाह्य पदार्थ अशरणभूत प्रतीत होते हैं । धर्म की आराधना-साधना न करे तब तक आत्मा की मुक्ति संभव नहीं है ।

अरिहंत आदि की शरणागति को स्वीकार करने से आत्मा

निर्भय बन जाती है । वह आत्मा अल्प भवों में ही भव के बंधन से मुक्त बनकर शाश्वत अजरामर पद प्राप्त कर लेती है ।

मृत्यु समय जो आत्मा अरिहंत आदि की शरण स्वीकार करती है, वह आत्मा समाधिमरण प्राप्त करती है ।

6. समाधि का छठा सूत्र है-**दुष्कृतगर्हा ।**

इस लोक और परलोक में मोह व अज्ञानतावश जिन दुष्कृतों का आचरण किया हो, उन सब की गर्हा व निंदा करनी चाहिए ।

गर्हा व निंदा तिरस्कार स्वरुप हैं, जिस वस्तु की हम निंदा करते हैं, वह वस्तु हमसे दूर होती जाती है । सुकृतों की अथवा सुकृत का आचरण करनेवालों की निंदा करने से हम सुकृत-मुक्त बनते हैं और दुष्कृतों की निंदा व गर्हा करने से हम दुष्कृत-मुक्त बनते हैं ।

सुकृतों की निंदा करने से पुण्य का क्षय होता है और दुष्कृतों की निंदा-गर्हा करने से पाप का क्षय होता है ।

संसारी आत्मा के भूतकाल के इतिहास पर थोड़ा सा विहंगावलोकन किया जाय तो स्पष्ट पता चलेगा कि उस आत्मा ने पापाचरण अत्यधिक प्रमाण में किया है और धर्माराधना नहींवत् की है । जो भी पाप किए हैं, वे हँसते-हँसते और खूब उत्साहपूर्वक किए हैं, जबकि जब भी धर्म किया है वह भी अल्प प्रमाण में, अनिच्छा से या स्वार्थ की गंदी भावना से ही किया है, अतः आत्मा में पाप के संस्कार अत्यंत ही गाढ़ रहे हुए हैं, जबकि धर्म व पुण्य के संस्कार अत्यंत ही अल्प प्रमाण में हैं ।

पाप के गाढ़ संस्कारों को निर्मूल करने के लिए तीव्र-दुष्कृत-गर्हा अनिवार्य है । दुष्कृत-गर्हा जितनी तीव्र होगी, पाप-मुक्ति उतनी ही तीव्र बनेगी और दुष्कृत-गर्हा जितनी तीव्र होगी, पाप-मुक्ति उतनी ही तीव्र बनेगी और दुष्कृत-गर्हा जितनी मंद होगी, उतनी ही पाप-मुक्ति अल्प होगी ।

7. समाधि का सातवाँ सूत्र है-**सुकृत अनुमोदना ।**

अनुमोदना करने से गुणाकार होता है । पाप की अनुमोदना करने से पाप का गुणाकार होता है और पुण्य की अनुमोदना करने से पुण्य का गुणाकार होता है ।

स्वकृत-सुकृत का परिणाम अत्यधिक अल्प प्रमाण में है, क्योंकि हमारी शक्ति परिमित हैं, परंतु अनुमोदना द्वारा हम दूसरे के सुकृत को भी अपना सुकृत बना सकते हैं ।

अनुमोदना में अपूर्व शक्ति हैं, अनुमोदना द्वारा जगत् में हो रहे समस्त सुकृतों को अपना बनाकर उनके पुण्य में भागीदार बन सकते हैं, अतः भावपूर्वक जगत् में हो रहे समस्त सुकृतों की अनुमोदना करनी चाहिए ।

**'श्री अरिहंत परमात्मा के धर्मोपदेश आदि समस्त सुकृत-अनुष्ठानों की अनुमोदना करता हूँ । समस्त सिद्ध-भगवंतों के सिद्धभाव की मैं अनुमोदना करता हूँ । समस्त आचार्य भगवंतों के आचार पालन, आचारोपदेश और शासन-प्रवर्तन आदि सुकृतों की अनुमोदना करता हूँ । समस्त उपाध्याय भगवंतों के सूत्र-दान, विनय-गुण तथा स्वाध्याय आदि योगों की अनुमोदना करता हूँ । समस्त साधु भगवंतों के पवित्र साध्वीचार, निर्मल चारित्र पालन, जिनाज्ञा-समर्पण आदि सुकृतों की अनुमोदना करता हूँ ।**

8. समाधि का आठवाँ सूत्र : **भावनाओं से आत्मा को भावित करना ।**

इस जगत् में रहे जड़ व चेतन पदार्थों के साथ किस प्रकार का चिंतन किया जाय कि जिससे आत्महित हो सके-वही भाव धर्म है । अनित्य, अशरण, संसार, एकत्व, अन्यत्व और अशुचि भावना से आत्मा को भावित करने से जड़ पदार्थों के प्रति विरक्ति भाव दृढ़ बनता है । वैराग्य की पुष्टि के लिए इन भावनाओं का सेवन अत्यंत ही अनिवार्य है । जड़ पदार्थ नाशवंत हैं, क्षणभंगुर हैं, आज नहीं तो कल नष्ट होने ही वाले हैं' इस प्रकार के चिंतन से अपने चित्त को अच्छी तरह से भावित किया हो तो किसी निकटस्थ प्रिय व्यक्ति की मृत्यु के समाचार सुनकर भी अपने मन को समाधि में स्थिर रख सकते हैं और स्वयं की मृत्यु आने पर भी चित्त को समाधिस्थ रखा जा सकता है ।

आत्मा को भावनाओं से भावित करने के लिए प्रतिदिन विचार करें :–

1. इस संसार में सभी बाह्य पदार्थ नश्वर हैं, अतः उनके नाश पर अफसोस करना निरर्थक है ।

2. इस जगत् में मृत्यु से बचाने वाला कोई नहीं है । अखूट-संपत्ति हो, अनेक देशों पर आधिपत्य हो...तो भी मृत्यु से बचाने वाला कोई नहीं है ।

3. इस संसार में माता-पिता-भाई-बहिन-चाचा-चाची आदि का मोह रखना निरर्थक है, क्योंकि कर्म के विचित्र गणितानुसार पिता मरकर पुत्र बन सकता है और पुत्र मरकर पिता भी बन सकता है । दुश्मन मित्र बन सकता है और मित्र दुश्मन बन सकता है ।

◆ इस संसार में हम अकेले ही आए है और अकेले ही जाएंगे । मृत्यु के समय कोई भी वस्तु हमारे साथ चलने वाली नहीं है ।

◆ हम इस देह से सर्वथा भिन्न हैं । देह के नाश में अपना नाश नहीं है । मृत्यु समय शरीर यहीं पड़ा रहता है और आत्मा अकेली ही जाती है ।

◆ यह शरीर गंदगी का ढ़ेर है-अशुचि से भरा हुआ है । इसके नौ द्वारों से सतत अशुचि का प्रवाह बह रहा है । लहसुन को कस्तूरी के बीच भी रखा जाय तो भी वह सुगंधित नहीं बन सकता, बस, इसी प्रकार इस देह को सुंदर दिखाने के लिए कितने ही शणगार सजे जाँय, फिर भी यह देह अपनी अशुचि के स्वभाव का त्याग करने वाली नहीं है, अतः इस देह पर निरर्थक ममता क्यों ?

इस संसार में रहे समस्त संसारी जीवों के प्रति मैत्री-प्रमोद-करुणा और माध्यस्थ्य भावना से अपनी आत्मा को भावित करना चाहिए ।

◆ जगत् के सभी जीवों के प्रति मैत्री भावना होनी चाहिए ।

◆ जगत् में जितने गुणवान व सुखी प्राणी हैं, उनके प्रति प्रमोद भाव होना चाहिए ।

◆ जगत् में जितने भी दुःखी प्राणी हैं, उनके प्रति करुणा भावना होनी चाहिए ।

◆ जगत् में जितनी पापी आत्माएँ हैं, जिनको उपदेश देना भी साँप को दूध पिलाने की तरह निरर्थक है, ऐसी पापी आत्माओं के प्रति माध्यस्थ्य भावना होनी चाहिए ।

जड़ व चेतन के प्रति इस प्रकार की भावनाओं से आत्मा को भावित किया जाय तो बदलते संयोग व बदलती परिस्थितियों में हम अपने मन को समाधिस्थ रख सकते हैं और उसी के परिणामस्वरुप मृत्यु की अंतिम पलों में समाधि भी रख सकेंगे ।

9. समाधि का नौवाँ सूत्र है-**अनशन स्वीकार ।**

आहार ग्रहण करना आत्मा का मूलभूत स्वभाव नहीं है । राग और द्वेष रुप भाव कर्म के कारण आत्मा ज्ञानावरणीय आदि द्रव्यकर्मों का बंध करती है, और उन कर्मों के उदय के कारण आत्मा शरीर धारण करती है और उस शरीर को टिकाने के लिए उसे आहार आदि लेना पड़ता है ।

कर्म से सर्वथा मुक्त बनी आत्माएँ अणाहारी हैं । परंतु सभी संसारी आत्माएँ आहार लेती हैं । आहार लेते समय भी राग-द्वेष कर आत्मा अपना नया संसार खड़ा कर देती है । अतः मुमुक्षु आत्मा को एक मात्र शरीर को टिकाने के लिए ही अनासक्त भाव से आहार ग्रहण करना चाहिए और जब यह शरीर आराधना में साथ देना छोड़ दे, और उसके साथ दृढ़ मनोबल हो तो चारों प्रकार के आहार त्याग रुप अनशन को स्वीकार कर आहार व देह की ममता का त्याग कर देना चाहिए ।

विधिपूर्वक अनशन का स्वीकार व पालन करने से अणाहारी पद की उपासना होती है ।

शालिभद्र, धन्ना अणगार आदि अनेक पुण्यवंत आत्माओं ने अपने आयुष्य की अल्पता को जानकर पादपोपगमन अनशन

स्वीकार किया था और अत्यंत समाधिपूर्वक कालधर्म प्राप्त कर सर्वार्थसिद्ध विमान में गए थे ।

ऐसी महान् आत्माओं को याद कर स्व देह के प्रति ममत्व भाव का त्याग करते हुए अनशनव्रत को स्वीकार करना चाहिए ।

10. समाधि का दसवाँ सूत्र-**नवपद ध्यान ।**

नवपद और नवकार एक दूसरे के पर्याय ही हैं । नमस्कार महामंत्र चौदह पूर्व का सार है । चौदह पूर्वधर महर्षि भी अंतिम समय में नमस्कार महामंत्र का ही स्मरण व ध्यान करते हैं । नमस्कार महामंत्र में जिनशासन के समस्त प्राणभूत तत्त्वों का समावेश हो जाता है । देव-गुरु और धर्म तीनों का समावेश नमस्कार महामंत्र व नवपद में रहा हुआ है । मृत्यु की अंतिम वेला में जो पुण्यवंत आत्मा नमस्कार महामंत्र में अपने मन को स्थिर करती है, वह आत्मा अवश्य ही सद्गति प्राप्त करती है ।

नवकार के प्रभाव से सर्प-फूल की माला में तथा अग्नि-जल में रुपांतरित हो जाती है ।

अन्य सभी मंत्र कहलाते हैं, जबकि नवकार महामंत्र कहलाता है ।

अंतिम समय में नवकार की ही शरणागति स्वीकार करनी चाहिए ।

इस प्रकार समाधि के इन 10 सूत्रों को जीवन में आत्मसात् करने से मृत्यु की वेला में समाधिमरण की प्राप्ति हो सकती है ।

समाधिमय जीवन जीकर समाधिमरण प्राप्तकर शीघ्र ही जगत् के सभी जीव शाश्वत सुख के भोक्ता बनें, इसी शुभकामना के साथ ।

2

# समाधि मृत्यु के अनमोल सूत्र

1

चत्तारि मंगलं
अरिहंता मंगलं
सिद्धा मंगलं
साहू मंगलं
केवलि पन्नत्तो धम्मो मंगलं

2

इस दुनिया में चार ही मंगल स्वरुप है ।
अरिहंत परमात्मा मंगल है ।
सिद्ध भगवंत मंगल है ।
साधु भगवंत मंगल है ।
केवली भगवंत द्वारा बताया धर्म मंगल है ।

3

चत्तारि लोगुत्तमा
अरिहंता लोगुत्तुमा
सिद्धा लोगुत्तमा
साहू लोगुत्तमा
केवलि पन्नत्तो धम्मो लोगुत्तमो

4

इस दुनिया में चार ही लोक में उत्तम है
श्री अरिहंत परमात्मा लोक में उत्तम है ।
सिद्ध भगवंत लोक में उत्तम है ।
साधु भगवंत लोक में उत्तम है ।
केवली भगवंत द्वारा बताया हुआ
धर्म लोक में उत्तम है ।

5

चत्तारि सरणं पवज्जामि
अरिहंते सरणं पवज्जामि
सिद्धे सरणं पवज्जामि
साहु सरणं पवज्जमि
केवलि पन्नत्तं धम्मं
सरणं पवज्जामि

6

मैं चार की शरण स्वीकार करता हूँ
मैं अरिहंतों की शरण स्वीकार करता हूँ ।
मैं सिद्धों की शरण स्वीकार करता हूँ ।
मैं साधु भगवंतों की शरण स्वीकार करता हूँ ।
मैं केवली प्ररुपित धर्म की
शरण स्वीकार करता हूँ ।

7

खामेमि सव्व जीवे
सव्वे जीवा खमंतु मे ।
मित्ती मे सव्व भूएसु
वेरं मज्झं न केणइ ।।

8

मैं सभी जीवों से क्षमा मांगता हूँ
सभी जीव मुझे क्षमा करे ।
सभी प्राणियों के साथ मेरी मैत्री है ।
मुझे किसी से वैर नहीं है ।

9 राग द्वेष से रहित
वीतराग परमात्मा,
जगत् के स्वरुप को
यथार्थ स्वरुप से जानने वाले,
सर्वज्ञ, परमात्मा,
मोक्ष एवं मोक्ष मार्ग के
वास्तविक स्वरुप को बतानेवाले
अरिहंत परमात्मा मेरे भगवान है ।

10 पांच महाव्रतों को
धारण करने वाले,
परमात्मा की आज्ञा के अनुसार
जीवन जीने वाले,
जगत् के जीवों को
मोक्ष मार्ग समझाने वाले
साधु भगवंत मेरे गुरुदेव है ।

11. अरिहंत परमात्मा के द्वारा
बताया हुआ,
जीव और जगत् का
कल्याण करने वाला
जैन धर्म ही मेरा धर्म है ।

12. अरिहंत परमात्मा की आज्ञा ही
सर्वोपरि और कल्याणकारी है
परंतु
अज्ञानतावश अथवा मोह के अधीन
बनकर प्रभु की आज्ञा का
भंग किया हो तो
त्रिविध-त्रिविध मिच्छा मि दुक्कडम्

13.

जगत् के सभी जीवों को
अभयदान देना, प्रभु की आज्ञा है ।
अज्ञानता व मोह से मैंने
जीव हिंसा का पाप किया हो,
उसके लिए मैं हृदय से क्षमा मांगता हूँ ।

14.

झूठ बोलना भयंकर पाप हैं,
फिर भी आवेश में आकर,
लोभ के वशीभूत होकर,
भय के कारण अथवा हंसी मजाक में
झूठ बोला होऊं, उस पाप के लिए
मैं हृदय से पश्चात्ताप करता हूँ ।

15. चोरी करना, बडा अपराध है ।
चोरी करने से सामने वाले को
पीडा होती है, फिर भी
बाल्य वय में बालिशतावश चोरी की हो,
तरुण वय में स्कूल कॉलेज में परीक्षा में तथा
युवावस्था धन के लोभ से व्यापार आदि में
चोरी की हो उस पाप के लिए
मैं हृदय से माफी मांगता हूँ ।

16. आत्म स्वभाव में रमणता-ब्रह्मचर्य
मेरा आत्म धर्म हैं । फिर भी मोह की
गुलामी से स्व-स्त्री के साथ, पर-स्त्री के साथ
वेश्या आदि के साथ
(पर पुरुष के साथ) मैथुन सेवन किया हो
उस पाप के लिए त्रिविध
मिच्छा मि दुक्कडम् ।

17. सोना चांदी हीरा-मोती-रुपए आदि
पर वस्तुएं हैं, फिर भी
ममता के वशीभूत होकर उसका
संग्रह किया हो,
उस पाप के लिए
हृदय से क्षमा मांगता हूँ और
उस पाप को वोसिराता हूँ ।

18. क्रोध करना, मेरा आत्म-धर्म
नहीं है, फिर भी
स्वयं की इच्छा पूर्ति नहीं होने से
अथवा धन के लोभ में आकर
मैंने क्रोध किया हो,
अत : अपराधी के तौर पर मैं
सभी से क्षमा मांगता हूँ ।

19. धन-संपत्ति, ज्ञान, तप एवं
दान आदि का अभिमान
करने जैसा नहीं है, फिर भी
मोह वश होकर मैंने अपने
जीवन में जो गर्व किया हो
उस पाप के लिए
मैं हृदय से पश्चात्ताप करता हूँ ।

20. माया-कपट करना पाप है,
निष्कपट-सरलता धर्म है ।
फिर भी धन के लोभ
आदि के कारण मैंने जो
माया आचरण किया हो, उस
पाप के लिए मैं अत्यंत ही खिन्न हूँ ।

21. धन के लोभ के अधीन बनकर
मैंने जो क्रोध किया हो,
माया की हो,
किसी के साथ दुर्व्यवहार किया हो
वह सब मेरा पाप मिथ्या हो ।

22. स्वादिष्ट भोजन में लालसा कर के
धन, पत्नी, पुत्र, परिवार तथा
शरीर के प्रति राग भाव कर के
मैंने जो भयंकर पाप किए हो,
उन सब पापों के लिए
हृदय से क्षमा याचना करता हूँ ।

23. प्रतिकूल आहार, प्रतिकूल संयोग,
प्रतिकूल वातावरण तथा दुश्मन
आदि के प्रति द्वेष-भाव करके
मैंने जो जो पाप किए हो
उन सब पापों के लिए मैं
हृदय से पश्चात्ताप करता हूँ ।

24. छोटी-छोटी बातों को लेकर
अथवा धन के लोभ आदि के कारण
किसी के साथ झगडा किया हो,
किसी की मारपीट की हो, किसी के ऊपर
हाथ उठाया हो, सामनेवाले को
हैरान परेशान किया हो,
उन सब पापों के लिए हृदय से
मिच्छा मि दुक्कडम देता हूँ ।

25. आवेश में आकर, किसी के
बहकावे में आकर अथवा
धन के लोभ में आकर,
किसी के ऊपर
झूठा आरोप लगाया हो
उस पाप के लिए मैं
हृदय से क्षमा मांगता हूँ ।

26. अपने को अच्छा दिखाने के लिए,
किसी के साथ चाडी चुगली की हो ।
किसी की बात को इधर-उधर करके
सामने वाले के दिल को
ठेस पहुंचाई हो तो उसके लिए
मैं हृदय से क्षमा चाहता हूँ ।

27. अनुकूल पदार्थों को पाकर
मन में राग भाव और
प्रतिकूल पदार्थों को पाकर
मन में द्वेष भाव किया हो तो
मेरा वह पाप मिथ्या हो ।

28. दूसरों के दोष बतला कर
मैने दूसरों की पेट भरकर निंदा की हो,
किसी को हल्का
चित्रित किया हो,
उन सब पापों के लिए
मैं हृदय से माफी मांगता हूँ ।

29. किसी को अपने जाल में
फंसाने के लिए, मैंने माया पूर्वक
झूठ बोला हो और उसके द्वारा
सामने वाले के दिल को ठेस पहुँचाई हो
तो मेरा वह पाप मिथ्या हो

30. जो वीतराग नहीं हैं उन्हें भगवान
माना हो ।
जो निर्ग्रंथ नहीं है, उन्हें गुरु माना हो
और जो केवली प्ररुपित नहीं है,
उसे धर्म माना हो तो
उस मिथ्यात्व के सेवन द्वारा
जो पाप किए हो, उसके लिए
हृदय से क्षमा याचना करता हूँ ।

31. सुख के राग और दु :ख के द्वेष द्वारा
मैंने जो-जो पाप किए हो
उन सब पापों के लिए
मैं हृदय से क्षमा मांगता हूँ ।

32. जड़ के प्रति राग भाव कर के और
जीवों के प्रति द्वेष भाव कर के
मैंने जो-जो पाप किए हो,
उन सब पापों के लिए
मैं हृदय से मिच्छामि दुक्कडम्
देता हूँ ।

33. जाने-अनजाने में मैंने
देव-गुरु और धर्म की निंदा की हो
तो उस पाप के लिए
मैं हृदय से माफी मांगता हूँ ।

34. शत्रुंजय आदि महातीर्थों में जाकर
मैंने रात्रि भोजन, अभक्ष्य भक्षण
या अब्रह्म सेवन आदि का
पाप किया हो तो उन सब
पापों के लिए मैं हृदय से
मिच्छा मि दुक्कडम् देता हूँ ।

35. तारक परमात्मा के महा कल्याणकारी
कल्याणक दिनों में, पर्व दिनों में
और पर्वाधिराज जैसे महापर्व के
दिनों में प्रभु की आज्ञा के विरुद्ध
प्रवृत्ति करके जो पापाचरण किया हो,
उन पापों के लिए मैं
हृदय से पश्चात्ताप करता हूँ ।

36. धार्मिक स्थानों में धर्म के बजाय
अधर्म किया हो, पाप की प्रवृत्ति
कराई हो तो उन पापों के लिए
मैं हृदय से माफी मांगता हूँ

37. महाविदेह क्षेत्र में
सीमंधर स्वामी आदि बीस
विहरमान तीर्थंकर परमात्मा
अपनी धर्म देशना द्वारा जगत् के
जीवों पर जो महान उपकार कर रहे हैं,
उनके उन सुकृतों की मैं
हृदय से अनुमोदना करता हूँ ।

38. ध्रुव के तारे की तरह
जगत् के उत्तम जीवों को
मोक्ष की ओर आकर्षित करने वाले
शुद्ध स्वरुपी सिद्ध भगवंतों की
मैं हृदय से अनुमोदना करता हूँ ।

39. ज्ञानाचार आदि पंचाचारों का
पालन करनेवाले और दूसरों को भी
पालन कराने वाले
उत्तम सूरि भगवंतों के
इस सुकृत की
हृदय से अनुमोदना करता हूँ ।

40. जिन शासन की सुंदर
आराधना करनेवालें,
जिन शासन की महान प्रभावना करनेवालें,
और शासन पर आए हमलों से
जिन शासन की रक्षा करनेवालें,
आचार्य भगवंतों के सुकृतों की
मैं हृदय से अनुमोदना करता हूँ ।

41. छत्तीस गुणा छत्तीस अर्थात्
1296 गुणों के धारक
आचार्य भगवंत के गुण-स्वरुप की
मैं हृदय से
अनुमोदना करता हूँ ।

42. दिग् दिगंत तक जैन शासन की
ध्वजा को फैलाने वाले
आचार्य भगवंतों की
मैं हृदय से अनुमोदना
करता हूँ ।

43. विनय गुण के भंडार, ज्ञान के
अखूट भंडार, सूत्र दान में हमेशा तत्पर
ऐसे उपाध्याय भगवंतों के सुकृतों की मैं
हृदय से अनुमोदना करता हूँ ।

44. महाव्रतों का निरतिचार
पालन करनेवाले,
सहनशीलता की साक्षात् मूर्ति और
समता की साधना में सदैव तत्पर
ऐसे साधु भगवंतों की
मैं हृदय से अनुमोदना करता हूँ ।

45. छह जीव निकाय के रक्षक,
सात प्रकार के भयों से मुक्त तथा
आठ प्रकार के कर्मो को
नष्ट करने में सदैव उद्यमशील
ऐसे साधु भगवंतों की
मैं हृदय से अनुमोदना करता हूँ ।

46. सारी दुनियाँ कंचन और
कामिनी के पीछे पागल हैं,
ऐसे कंचन-कामिनी के त्यागी
साधु भगवंतों की मैं
हृदय से अनुमोदना करता हूँ ।

47. मैत्री प्रमोद-करुणा और
माध्यस्थ्य भावनाओं से
अपनी आत्मा को सदैव
भावित करनेवाले साधु भगवंतों की
मैं हृदय से अनुमोदना करता हूँ ।

48. जगत् के सभी जीवों को
अभयदान देने में सदैव तत्पर,
पवित्र शील धर्म का सदैव पालन करनेवालें
बाह्य और अभ्यंतर तप की
साधना में सदैव उद्यमशील और
अनित्य आदि भावनओं से अपने
मन को भावित करनेवालें साधु भगवंतों की
मैं हृदय से अनुमोदना करता हूँ ।

49. ईर्या समिति आदि पांचसमिति के
पालन में सदैव उद्यमशील
ऐसे साधु-साध्वीजी भगवंतों की
मैं हृदय से अनुमोदना करता हूँ ।

50. क्षमा-नम्रता आदि दश प्रकार के
श्रमण धर्म का पालन करने में
सदैव तत्पर ऐसे साधु-साध्वीजी
भगवंतों के सुकृतों की
मैं हृदय से अनुमोदना करता हूँ ।

51. बारह व्रतों का पालन करने में
सदैव तत्पर, ऐसे उत्तम श्रावकों की
मैं हृदय से
अनुमोदना करता हूँ ।

52. जिन मंदिर निर्माण, उपाश्रय निर्माण
और आयंबिल भवन के निर्माण में
अपनी लक्ष्मी का सद्व्यय करनेवाले
उदारदिल श्रावकों की
मैं हृदय से अनुमोदना करता हूँ ।

53. साधु साध्वी की उत्तम द्रव्यों से
भक्ति करने वाले,
दानवीर श्रावक-श्राविकाओं की मैं
हृदय से अनुमोदना करता हूँ ।

54. गृहस्थ जीवन में रहते हुए भी
निर्मल ब्रह्मचर्य का
आजीवन पालन करने वाले
विजय सेठ और विजया सेठानी जैसे
श्रावक-श्राविकाओं की मैं
हृदय से अनुमोदना करता हूँ ।

55.

काया की माया को
दूर करने के लिए
वर्धमान तप की सतत
ओलियाँ करनेवाले श्रावक-श्राविकाओं की
मैं हृदय से अनुमोदना करता हूँ ।

56.

आहार की आसक्ति को
तोडने के लिए निरंतर
बीस स्थानक तप, वर्षीतप, श्रेणीतप,
सिद्धि तप आदि दीर्घ तपश्चर्या
करनेवालें
श्रावक श्राविकाओं की मैं
हृदय से अनुमोदना करता हूँ ।

57. वृद्ध एवं ग्लान महात्माओं की
सेवा में सदैव तत्पर और
उन्हें शाता प्रदान करनेवालें
श्रावक श्राविकाओं की मैं
हृदय से अनुमोदना करता हूँ ।

58. श्रुत ज्ञान की रक्षा और
उसके संवर्धन के लिए
अपनी लक्ष्मी का सद्व्यय करनेवाले
उदारदिल श्रावकों की
मैं हृदय से अनुमोदना करता हूँ

59. आर्थिक दृष्टि से कमजोर
श्रावक-श्राविकाओं के
जीवन उत्थान के लिए
उदार मन से आर्थिक सहयोग
करने वाले श्रावक-श्राविकाओं की
मैं हृदय से अनुमोदना करता हूँ ।

60. सम्यग्दृष्टि देवता
समवसरण आदि की रचना कर
तारक तीर्थंकर परमात्मा की जो
भक्ति करते हैं, उनके उन सभी
सुकृतों की मैं हृदय से
अनुमोदना करता हूँ ।

61. जैन शासन की रक्षा, आराधना और प्रभावना में सहायता करनेवाले सम्यग्दृष्टि देवताओं के सभी सुकृतों की मैं हृदय से अनुमोदना करता हूँ ।

62. शासन प्रभावना के महान् कार्यों में सहायता करने वाले सभी सम्यग्दृष्टि देवताओं की मैं हृदय से अनुमोदना करता हूँ

63. अविरत सम्यग्दृष्टि मनुष्य व
तिर्यंच, प्रभु की आज्ञानुसार
दया, दान, परोपकार
आदि के जो सत्कार्य
करते हैं, उन सभी के सुकृतों की
मैं हृदय से अनुमोदना करता हूँ ।

64. मैंने इस जीवन में शत्रुंजय आदि
महातीर्थों की जो यात्राएं की हैं ,
उन सब की मैं हृदय से
अनुमोदना करता हूँ ।

3

# पंच सूत्र प्रथम सूत्र भावानुवाद

**(1) णमो वीआरागाणं सव्वण्णूणं देविंदपूइआणं जहट्ठिअवत्थुवाईणं तेलुक्कगुरूणं अरुहंताणं भगवंताणं ।**

वीतराग (राग-द्वेष से रहित) सर्वज्ञ, देवेन्द्रों द्वारा पूजित (इन्द्र जैसे ऐश्वर्यवान और समर्थ महानुभाव भी अरिहंतों की उपासना करते हैं, क्योंकि अरिहंत ही सर्वशक्तिसंपन्न हैं) यथार्थवस्तुवादी (क्रोध, लोभ, मान, माया, हास्य, भय और अज्ञान जैसे झूठ बोलने के सभी कारणों से रहित होने से भगवान के सभी वचन सर्वदा सत्य और सभी के लिए हितकारी ही होते हैं) और तीन लोक के जीवमात्र के गुरु (धर्म का मार्ग दिखलाने वाले) ऐसे अरिहंत भगवंतों को मैं नमस्कार करता हूँ ।

**(2) जे एवमाइक्खंति-इह खलु अणाइ जीवे, अणाइ जीवस्स भवे, अणाइ कम्मसंजोगनिवत्तिअे, दुक्खरूवे दुक्खफले दुक्खाणुबंधे एअस्स णं वुच्छित्ती सुद्धधम्माओ, सुद्धधम्मसंपत्ती**

**पावकम्मविगमाओ, पावकम्मविगमो तहाभवत्ताइ भावओ ।**

इन अरिहंत भगवंतों ने कहा है कि सभी जीव अनादिकाल से हैं, यानि कभी उत्पन्न नहीं हुए हैं और कभी विनाश नहीं होंगे । सभी जीवों का कर्म के साथ संयोग अनादिकाल से है । (यह संयोग नदीप्रवाह जैसा है- प्रवाह में पानी बहता है, फिर भी प्रवाह स्वरूप सदा रहता है, इसी तरह पुराने पुराने कर्मों का वियोग होता है, नये नये कर्म का संयोग होता है ।) और इसी कर्मसंयोग के कारण जीव जन्म, बूढापा, रोग, मौत आदि विविध दुःखों से भरे हुए संसार में चक्कर काटता रहता है । अतः संसार भी अनादि काल से है, दुःख से भरा हुआ है, संसार की हर प्रवृत्ति का फल भी दुःख है, और परम्परा भी दुःख की ही चलती है । यानि अपनी ही अनुचित प्रवृत्ति से हम दुःख पाते हैं, हम को दुःख देनेवाला कोई ईश्वर भी नहीं है और कोई दूसरा व्यक्ति भी हम को दुःख नहीं देता है ।

इस दुःखमय संसार का अंत शुद्ध धर्म की प्राप्ति से होता है । शुद्ध धर्म की प्राप्ति के लिए पाप कर्म का नाश आवश्यक है । (मिथ्यात्व और क्रोधादि कषाय मुख्य पाप कर्म हैं, इनके प्रभाव से शुद्ध धर्म से विरुद्ध बातों में रुचि होती है, और धर्मविरुद्ध आचरण होता है, जब तक पापबुद्धि तीव्र

होगी तब तक धर्म के प्रति आकर्षण नहीं होगा, तो धर्म की प्राप्ति कैसे होगी ? अतः पाप के प्रति रुचि-आकर्षण-पक्षपात कम करना जरूरी है) पाप कर्म का नाश तथाभव्यत्व आदि भावों से होता है (आत्मा में जब विशिष्ट योग्यता प्रकट होती है, तब पापकर्म विनाश पाते हैं)

**(3) तस्स पुण विवागसाहणाणि 1. चउसरणगमणं, 2. दुक्कड- गरिहा, 3. सुकडाणसेवणं, अओ कायव्वमिणं होउकामेणं सया सुप्पणिहाणं भुज्जो भुज्जो संकिलेसे, तिकालमसंकिलेसे.**

तथाभव्यत्व जैसे भावों को प्रकट करने के लिए तीन साधन हैं (1) चार शरण का स्वीकार (2) अपने दुष्कृतों की निंदा-गर्हा और (3) स्वयं सुकृतों का आचरण करना और सभी के सुकृतों की अनुमोदना करनी चाहिए ।

आत्मा की योग्यता के विकसित करने के लिए उपरोक्त तीन साधन अत्यंत उपयोगी हैं अतः हमेशा मन में द्रढ प्रणिधान पूर्वक ये तीन, बार-बार कर्त्तव्य हैं, खास कर के संक्लेश-उपाधि चिंता के अवसर पर बार बार कर्त्तव्य हैं, संक्लेश का प्रसंग न हो, तो भी दिन में तीन बार अवश्य कर्त्तव्य हैं ।

**(4) जावज्जीवं मे भगवंतो परमतिलोगनाहा अणुत्तरपुण्ण-संभारा खीणरागदोसमोहा, अचिंतचिंतामणि, भवजलहिपोआ, एगंतसरणा अरहंता सरणं.**

मुझे अरिहंत भगवान शरणभूत है ।

मुझे तीन लोक के सर्वश्रेष्ठ नाथ (योगक्षेम करने वाले) ऐसे अरिहंत भगवान शरणभूत है ।

मुझे उत्कृष्ट पुण्य के स्वामी अरिहंत भगवान शरणभूत है ।

मुझे राग-द्वेष और मोह-मूढता से रहित अरिहंत भगवान शरणभूत है ।

मुझे अचिंत्यचिंतामणि (कल्पनातीत कार्यसाधक) अरिहंत भगवान शरणभूत है ।

मुझे संसार सागर से पार उतारने वाली नौका समान अरिहंत भगवान शरणभूत है ।

मुझे एकांत शरण (यानि सर्वप्रकार से शरणभूत) अरिहंत भगवान शरणभूत है ।

**मूल**

**(5) तहा पहीणजरामरणा अवेयकम्मकलंका, पणट्ठवाबाहा, केवलनाणदंसणा, सिद्धपुरनुवासी, निरुवमसुहसंगया, सव्वहा कयकिच्चा, सिद्धा सरणं ।**

मुझे बूढापा और मौत से मुक्त सिद्ध भगवान शरणभूत है ।

मुझे कर्म के कलंक से रहित सिद्ध भगवान शरणभूत है ।

मुझे सभी प्रकार की बाधाओं से मुक्त सिद्ध भगवान शरणभूत है ।

मुझे केवलज्ञान और केवलदर्शन से युक्त सिद्ध भगवान शरणभूत है ।

मुझे मोक्षनगर में-सिद्धशिला पर सदा के लिए वास करनेवाले सिद्ध भगवान शरणभूत है ।

मुझे निरुपम-अवर्णनीय सुख में मग्न सिद्ध भगवान शरणभूत है ।

मुझे सभी प्रकार से कृतकृत्य सिद्ध भगवान शरणभूत है ।

**(मूल)**

**(6) तहा पसंतगंभीरासया सावज्जजोगविरया पंचविहायार-जाणगा परोवयारनिरया पउमाइनिदंसणा झाणज्झयण-संगया, विसुज्झमाणभावा साहू सरणं.**

मुझे प्रशांत और गंभीर आशयवाले साधु भगवान शरणभूत है ।

मुझे सभी पापव्यापार से रहित साधु भगवान शरणभूत है ।

मुझे पांच प्रकार के (ज्ञान, दर्शन, चारित्र, तप और वीर्य इन पांच के विषय में शुभ आचार) सदाचार के ज्ञाता (और आचरण करनेवाले) साधु भगवान शरणभूत है ।

मुझे परोपकार में तत्पर साधु भगवान शरणभूत है ।

मुझे पद्म आदि से दृष्टांतभुत (पद्म कीडच और पानी से अलिप्त है इसी तरह साधु भगवान संसार और भोग से अलिप्त है-ऐसे दृष्टांतवाले) साधु भगवान शरणभूत है ।

मुझे प्रतिपल ध्यान और अध्ययन में मग्न साधु भगवान शरणभूत है ।

मुझे सतत विबुद्ध होने वाले शुभ भाव-परिणाम से युक्त साधु भगवान शरणभूत है ।

**(मूल)**

**(7) तहा सुरासुरमणुअपूइओ मोहतिमिरंसुमाली रागदोस विसपरममंतो होऊ सयलकल्लाणाणं कम्मवणविहावसू साहगो सिद्धभावस्स केवलिपण्णत्तो धम्मो जावज्जीवं मे भगवं सरणं.**

मुझे जिनेश्वर भगवान द्वारा बताया हुआ जैनधर्म जीवन पर्यंत शरणभूत है ।

मुझे देव-दानव और मानवों से पूजित जैनधर्म जीवन पर्यंत शरणभूत है ।

मुझे राग और द्वेष के विष को उतारनेवाले श्रेष्ठमंत्रभूत जैनधर्म जीवन पर्यंत शरणभूत है ।

मुझे सभी कल्याण में कारणभूत जैनधर्म जीवन पर्यंत शरणभूत है ।

मुझे कर्मरूपी जंगल को खाक करने में दावानल समान जैनधर्म जीवन पर्यंत शरणभूत है ।

मुझे सिद्धभाव की प्राप्ति के लिए साधनभूत जैनधर्म जीवन पर्यंत शरणभूत है ।

**(मूल)**

**(8) सरणमुवगओ अ एअेसिं गरिहामि दुक्कडं. जं णं अरहंतेसु वा, सिद्धेसु वा, आयरिएसु वा, उवज्झायेसु वा, साहूसु वा, साहूणीसु वा, अन्नेसु वा, धम्मट्ठाणेसु वा, माणणिज्जेसु पूअणिज्जेसु, तहा माइसु वा, पिइसु वा, बंधूसु वा, मित्तेसु वा, उवयारीसु वा, ओहेण वा जीवेसु, मग्गट्ठिअेसु वा, अमग्गट्ठिअेसु वा, मग्गसाहणेसु वा, अमग्गसाहणेसु वा, जंकिंचि वितहमायरिअं अणायरिअव्वं अणिच्छिअव्वं, पावं पावाणुबंधिं, सूहुमं वा, बायरं वा, मणेण वा, वायाए वा, कायेण वा, कयं**

**वा, कारावेिअं वा अणुमोइअं वा, रागेण वा, दोसेण वा, मोहेण वा, इत्थ वा जम्मे जम्मंतरेसु वा, गरहिअमेअं दुक्कडमेअं उज्झिअव्वमेअं, विआणिअं मअे कल्लाण- मित्तगुरुभगवंत-वयणाओ एवमेअं ति रोइअं सद्धाअे, अरहंत-सिद्धसमक्खं, गरिहामि अहमिणं दुक्कडमेअं उज्झिअव्वमेअं इत्थ मिच्छामि दुक्कडं, मिच्छामि दुक्कडं मिछामि दुक्कडं ।**

**आत्म गर्हा**- इन चार (अरिहंत, सिद्ध, साधु और जैनधर्म) के शरण में गया हुआ मैं अपने जीवन में किये हुए दुष्कृत-पापकर्म की निंदा करता हूँ ।

मैंने अरिहंत सिद्ध आचार्य, उपध्याय साधु-साध्वी के बारे में तथा अन्य भी (संघ, श्रावक-श्राविका-धर्ममित्र आदि) धर्मस्थान में माननीय, पूजनीय व्यक्तियों के बारे में तथा माता, पिता, स्वजन (भाई, बहन, पत्नी, संतान, आदि स्वजन वर्ग) तथा मित्र, उपकारी शिक्षक वगैरह तथा धर्म मार्ग में नहीं रहे हुए सभी जीवों के बारे में तथा धर्म मार्ग के साधन के बारे में तथा धर्म के जो साधन नहीं हैं (जैसे कि मकान, फर्नीचर वगैरह) उनके बारे में जो विपरीत आचरण किया हो ।

अपनी बुद्धि को महत्व देकर भगवान के वचन-आगम-

शास्त्र-गुरुवचन से विपरीत बात को लोग में फैलाना इन चार प्रकार में से जो कुछ भी गलत किया हो, उन सभी को याद करके तथा जो कुछ अनाचरणीय का आचरण किया हो, अनिच्छनीय प्रवृत्ति का आचरण किया हो, सारांश यह है कि जो भी पाप हैं, जो भी पाप की परम्परा चलानेवाला है ऐसा कोई भी कार्य फिर वह छोटा हो या बडा हो, मैंने मन से वचन से शरीर से किया हो, करवाया हो या करनेवाले को प्रोत्साहन दिया हो, अनुमोदन किया हो फिर वह राग से हो, द्वेष से हो या मोह से हो, इस जीवन में किया हो, पूर्वभवों में किया हो, वह पाप-पाप ही है, अतः निंदनीय है, दुष्कृत है, छोडने योग्य है ।

कल्याणमित्र ऐसे गुरुभगवंतो के मुख से मैंने ज्ञान पाया है कि उपरोक्त सभी पाप निंदनीय हैं, त्याज्य हैं और मैं श्रद्धा के साथ इसका स्वीकार करता हूँ । अतः अरिहंत और सिद्ध भगवंतों की साक्षी में मैं इस जीवन में (और पूर्वभवों मे किये हुए) उपरोक्त सभी पापों की गर्हा करता हूँ निंदा करता हूँ । त्याज्य के रूप में स्वीकार करता हूँ । मैं हृदय से आँख में आँसू बहाते हुए गद्‌गद भाव से इन सभी पापों का मिच्छा मि दुक्कडम् देता हूँ ।

मिच्छा मि दुक्कडम्, मिच्छा मि दुक्कडम्, मिच्छा मि दुक्कडम्....

**(9) होउ मे एसा सम्मं गरिहा, होउ मे अकरणनिअमो, बहुमयं ममेअंति इच्छामो अणुसट्ठिं अरहंताणं भगवंताणं गुरूणं कल्लाणमित्ताणंति ।**

मेरी यह दुष्कृत निंदा सच्ची हो । मुझे पाप फिर से नहीं करने का नियम हो ! मुझे यह दुष्कृतनिंदा और पाप अकरण का नियम मान्य है, स्वीकार्य है । मैं अरिहंत भगवान और गुरुभगवंतों की हितशिक्षा की इच्छा रखता हूँ । मैं अरिहंत और गुरुभगवंत के पास से पापमुक्ति के लिए बार बार हितोपदेश-प्रेरणा मिलती रहे ऐसी भावना रखता हूँ ।

**(10) होउ मे एएहिं संजोगो, होउ मे एसा सुपत्थणा, होउ मे इत्थ बहुमाणो, होउ मे इओ मुक्खबीअं ति. पत्तेसु एएसु अहं सेवारिहे सिआ, आणारिहे सिआ, पडिवत्तिजुए सिआ, निरइआरपारगे सिआ.**

मैं ऐसे कल्याणमित्र बने हुए अरिहंतों के और गुरुभगवंतों के समागम की आशा रखता हूँ । मेरी बस यही (अरिहंत-गुरुभगवंत के समागम की) एक मात्र श्रेष्ठ प्रार्थना हो (यानी इनके समागम के सिवाय दूसरी कोई

बात के लिए मुझे इच्छा न हो) मेरा हमेशा इन पर (अरिहंत-गुरुभगवंत पर) बहुमानभाव हो, और मुझे इनसे ही मोक्षबीज (सही साधनामार्ग) की प्राप्ति हो...(ये मेरे मनोरथ हैं)

मैं इन सभी की सेवा के योग्य बनूं ! (अरिहंतादि की सेवा करने का सौभाग्य भी योग्यता प्रकट होने पर ही प्राप्त होता है) मैं इन सभी की आज्ञा का पालन करने में समर्थ बनूं। (वे मुझे आज्ञा करे ऐसी मेरे में योग्यता प्रकट हो) मैं इन सभी की (यानी भक्ति-बहुमान उचित विनय आदि करनेवाला बनूं ! मैं इन की सेवा-आज्ञा और प्रतिपत्ति में अतिचार लगाये बिना करुं) !

**(11) संविग्गो जहासत्तिए सेवेमि सुकडं। अणुमोएमि सव्वेसिं अरहंताणं अणुट्ठाणं सव्वेसिं सिद्धाणं सिद्धभावं, सव्वेसिं आयरियाणं आयारं, सव्वेसिं उवज्झायाणं सुत्तप्पयाणं, सव्वेसिं साहूणं साहुकिरिअं, सव्वेसिं सावगाणं मुक्खसाहणजोगे, सव्वेसिं देवाणं सव्वेसिं जीवाणं होउकामाणं कल्लाणासयाणं मग्गसाहणजोगे।**

**सुकृत आसेवन-अनुमोदना** (मोक्ष की इच्छावाला मैं यथाशक्ति सुकृत का आसेवन करता हूँ)।

मैं सभी (भूतकाल वर्तमानकाल व भविष्यकाल के)

अरिहंत भगवंतों की करुणा भावना-बीस स्थानक की आराधना, अरिहंत भव में उत्कृष्ट निरतिचार जीवन, अद्‌भुत संयम-ध्यान, तीर्थस्थापना, उपदेश आदि अनुष्ठान कार्यों की अनुमोदन करता हूँ।

मैं सभी सिद्ध भगवंतों के (सिद्ध बनने की साधना, अनंत ज्ञानसुख-आनंदमय स्थिति, अक्षय-अव्याबाध स्वरूप इत्यादि) सिद्धस्वरूप की अनुमोदना करता हूँ।

मैं सभी आचार्य भंगवंतों के (पाँच आचार का पालन-उपदेश-शासन प्रभावना आदि) आचार की अनुमोदना करता हूँ।

मैं सभी उपाध्याय भगवंतों के सुत्र पढाना आदि की अनुमोदना करता हूँ।

मैं सभी साधु भगवंतों के (साधना करना, सहन करना, सहायता करना इत्यादि) साधुक्रिया की अनुमोदना करता हूँ।

मैं सभी श्रावक-श्राविकाओं को देव-गुरु-धर्म (तत्त्वत्रयी) और दर्शन-ज्ञान-चारित्र (रत्नत्रयी) की प्राप्ति मोक्ष साधक जो योग प्राप्त हुआ है उसकी अनुमोदना करता हूँ।

मैं सभी देव-देवियों तथा (पशु-पक्षी-नरक में रहे हुए जीव जो भी मोक्ष के इच्छुक हैं उन जीवों को जो भी जितना भी धर्ममार्ग के साधन (उपासना की सामग्री की प्राप्ति हुई है, उन सबकी अनुमोदना करता हूँ । (जो भी, जहाँ भी, जितना भी जिनवचन के अनुसार शुभ हो रहा है, हुआ और होगा उन सभी की मैं अनुमोदना करता हूँ ।)

**(12) होउ मे एसा अणुमोअणा सम्मं विहिपुव्विआ, सम्मं सुद्धासया, सम्मं पडिवत्तिरूवा, सम्मं निरइयारा, परमगुणजुत्तअरहंताइसामत्थओ, अचिन्तसत्तिजुत्ता हि ते भगवंतो वीअरागा सव्वण्णु परमकल्लाणा, परमकल्लाणहेउ सत्ताणं ।**

मेरी यह अनुमोदना सम्यग्विधिपूर्वक हो...मेरी अनुमोदना सम्यग् शुद्ध आशय से सभर हो...

मेरी अनुमोदना सम्यग् प्रतिपत्तिरूप हो (उन अनुमोदनीय जीवों के प्रति बहुमानादि भाव और स्वयं उनके अनुमोदनीय कार्यों की यथाशक्ति आचरण से युक्त हो) मेरी अनुमोदना सम्यग् निरतिचार हो ।

मेरी ऐसी अनुमोदना परम गुणों से भरे अरिहंत आदि परमपुरुषों के सामर्थ्य से हो (शुभ कार्यों की सही

अनुमोदना भी एक उत्तम शुभ कार्य है और सभी शुभ कार्य अरिहंत आदि की कृपा से ही हो सकते हैं, यह बात भूलने जैसी नहीं है)

वे अरिहंत भगवान आदि परमपुरुष अचिन्त्य शक्ति से युक्त हैं, वीतराग है, सर्वज्ञ हैं, परम कल्याणभूत हैं और जीवमात्र के लिए परमकल्याण में कारणभूत हैं ।

**(13) मूढे अम्हि पावे अणाइमोहवासिओ अणभिन्ने भावओ, हिआहिआणं अभिन्ने सिआ, अहिअनिवित्ते सिआ, हिअपवित्ते सिआ, आराहगे सिआ, उचिअपडिवत्तीए सव्व सत्ताणं सहिअंति इच्छामि सुक्कडम्, इच्छामि सुक्कडम्, इच्छामि सुक्कडम्.**

मै मूढ हूँ, मैं पापी हूँ, मैं अनादि मोह वासना से वासित हूँ, सही रूप से हित क्या है और अहित क्या है ? उससे अज्ञात हूँ । अब मैं हित-अहित का ज्ञाता बनूं, अहितकार बातों से निवृत्त बनूं ! हितकर बातों में प्रवृत्ति करूँ ! आराधक बनूं ! क्योंकि सभी जीवों के लिए उचित के स्वीकार से और अनुचित के त्याग से ही अपना हित होता है । अतः मैं सुकृत्यों की इच्छा करता हूँ, सुकृत्यों की इच्छा करता हूँ, सुकृत्यों की इच्छा करता हूँ ।

**(14) एवमेअं सम्मं पढमाणस्स, सुणमाणस्स अणुप्पेहमाणस्स सिढिलीभवंति परिहायंति खिज्जंति असुहकम्माणुबंधा, निरणुबंधे वा असुहकम्मे भग्गसामत्थे सुहपरिणामेणं कडगबद्धे विअ विसे अप्पफले सिआ, सुहावणिज्जे सिआ, अपुणभावे सिआ.**

इस तरह (इस सूत्र को) अच्छी तरह से पढने वाले, सुननेवाले और अनुप्रेक्षा-चिंतन करनेवाले के (बार बार आत्मा में भावित होने से) अशुभ कर्मों के बंधन शिथिल बनते हैं, कम होते हैं, और क्षय पाते हैं अथवा अनुबंध से रहित अशुभकर्म सामर्थ्यहीन बनते हैं । मंत्र सामर्थ्य से जैसे जहर सामर्थ्य रहित बनता है, उसी तरह शुभ भाव परिणाम के कारण अशुभ कर्म भी अल्पफल वाले बनते हैं, सहज तथा दूर होने योग्य बनते हैं और फिर उन कर्मों का बंध नहीं होता है ।

**(15) तहा आसगलिज्जंति परिपोसिज्जंति निम्मविज्जंति सुहकम्माणुबंधा साणुबंधं च सुहकम्मं पगिट्ठं पगिट्ठभावज्जिअं नियम- फलयं । सुपउत्ते विअ महागओ सुहफले सिआ, सुहपवत्तगे सिआ, परमसुहसाहगे सिआ, अओ अपडिबंधमेअं असुहभवनिरोहेणं सुहभाव- बीअंति ।**

**सुप्पणिहाणं सम्मं पढिअव्वं, सम्मं सोअव्वं सम्मं अणुप्पेहिअव्वं ति.**

इसी तरह शुभ कर्मों के अनुबंध इकट्ठे होते हैं, अच्छी तरह से पुष्ट होते हैं, नये निर्माण होते हैं, सानुबंध बने हुए शुभ कर्म प्रकृष्ट शुभ भाव से प्राप्त होने के कारण प्रकृष्ट बनते हैं और अवश्य शुभ फल देनेवाले बनते हैं। अच्छी तरह से प्रयुक्त किये गये महा औषध की तरह शुभकर्म शुभफल देनेवाले बनते हैं, शुभ में प्रवर्त्तन करानेवाले बनते हैं और (इस परम्परा से) परमसुख (मोक्ष) के साधक बनते हैं।

अतः यह सूत्रपठन प्रतिबंध से रहित होकर अशुभ भाव का निरोध करता है और शुभ भाव का बीज बनता है। इसलिए (ऐसे महान् लाभ का कारण समझकर) इस सूत्र को अच्छी तरह से पढना चाहिए, अच्छी तरह से सुनना चाहिए और अच्छी तरह से अनुप्रेक्षा-चिंतन करना चाहिए।

**(16) नमो नमिअनमिआणं परमगुरु-वीअरागाणं, नमो सेसनमुक्कारारिहाणं, जयउ सव्वण्णुसासणं, परमसंबोहीअे सुहिणो भवंतु जीवा, सुहिणो भवंतु जीवा, सुहिणो भवंतु जीवा.**

मैं पूज्यों के भी पूज्य (देवेन्द्र से भी नमन कराये हुए) ऐसे परमगुरु वीतराग भगवंतों को नमस्कार करता हूँ।

मैं दूसरे भी नमस्कार योग्य महापुरुषों को नमस्कार करता हूँ। सर्वज्ञ-अरिहंत भगवान का शासन (जैन शासन) जय पाए।

परम संबोधि से (मिथ्यात्व-नाश, सम्यक्त्व की दृढ प्राप्ति और श्रुत-चारित्र धर्म के योग से) सभी जीव सुख को प्राप्त करें, सभी जीव सुख को प्राप्त करें, सभी जीव सुख को प्राप्त करें।

# 4 भव्यत्व परिपाक के उपाय

अनादिकालीन कर्म से जुडने की जीव की योग्यता को सहजमल कहते है एवं मुक्ति से जुडने की जीव की योग्यता को भव्यत्व कहते है । प्रत्येक जीव की योग्यता भिन्न-भिन्न होती है उसे **तथाभव्यत्व** कहते है । सहजमल का ह्रास एवं तथा भव्यत्व का विकास तीन साधनों से होता है । प्रथम दुष्कृत गर्हा, द्वितीय सुकृतानुमोदना तथा तृतीय अरिहंतादि की शरणागति ।

मुख्यरुप से दुष्कृत गर्हा का प्रतिबन्धक राग है । सुकृतानुमोदना का प्रतिबन्धक द्वेष है एवं चतु:शरणगमन का प्रतिबन्धक मोह है । राग दोष ज्ञान गुण से, द्वेष दर्शन गुण से एवं मोह दोष चारित्र गुण के माध्यम से जीता जाता है ।

राग दूर होने पर स्वयं के दोष दिखाई देते है, द्वेष दूर होने पर दूसरों के गुण दिखाई देते हैं एवं मोह दूर होने पर शरणभूत आज्ञा का स्वरुप जाना जाता है ।

स्वदोषदर्शन दोष की गर्हा करवाता है, परगुणदर्शन दूसरों की अनुमोदना करवाता है एवं (प्रभु) आज्ञा का स्वरुप समझने से आज्ञा की शरण में रहने की वृत्ति पैदा होती है ।

परमेष्ठि नमस्कार एवं शरणागति से दुष्कृतों की सर्वोत्कृष्ट गर्हा तथा सुकृत मात्र की सर्वोत्कृष्ट अनुमोदना होती है । दुष्कृत का त्यागकर सुकृत मात्र का सेवन करने की जिनाज्ञा है । अत: गुणवान पुरुषों की आज्ञा ही स्वीकार करने योग्य है ।

# 5 मुमुक्षु और मिच्छा मि दुक्कडम्

मुमुक्षु (मोक्ष की इच्छा करनेवाला) और मिच्छा मि दुक्कडम् दोनों अलग नहीं रह सकते हैं । शरीर की छाया की तरह मुमुक्षु और मिच्छामि दुक्कडम् साथ में रहते हैं । जिस मुमुक्षु के जीवन में **मिच्छा मि दुक्कडम्** को स्थान नहीं है, वह वास्तव में मुमुक्षु ही नहीं है । मोक्ष के शिखर पर चढने हेतु **मिच्छा मि दुक्कडम्** की सहायता अत्यावश्यक है ।

आज पर्यन्त भूतकाल में जो जीव मोक्ष में गये हैं, भविष्य में अनन्त जीव मोक्ष में जाएंगे और वर्तमान में जो मोक्ष में जा रहे हैं वे सभी इस **मिच्छा मि दुक्कडं** की मदद से ही ।

मोक्षप्राप्ति के असंख्य योगों में से एक मिच्छा मि दुक्कडं को निकाल दिया जाए तो शेष तमाम मोक्षयोग मोक्ष प्राप्त करवाने में असमर्थ बन जाएंगे । मिच्छा मि दुक्कडं प्रत्येक मुमुक्षु को कहता है, `ओ ममुक्षु ! यदि तुम्हे मोक्षप्राप्ति की इच्छा हो तो तुम मेरी शरण में आओ । मैं तुम्हें मोक्ष दिलाने की गारंटी (gurantee) देता है । जिसने भावपूर्वक मेरी शरणागति स्वीकारी है, उसको मैंने मोक्ष दिलाया ही । जिसके हृदय में मेरा स्थान है, उसका स्थान मोक्ष में निश्चित जानना चाहिए ।'

## 6 मिच्छा मि दुक्कडम्

**1. हे देवाधिदेव ! आज तक आपकी आज्ञाविरुद्ध मन-वचन-काया द्वारा जो कुछ भी किया हो, करवाया हो, अनुमोदन किया हो उसके लिए मिच्छा मि दुक्कडम् ।**

2. हे त्रिभुवनगुरु ! निगोद से आज तक मेरी आत्मा ने अठारह पापस्थानकों में से किसी भी पापस्थानक का मन-वचन-काया से सेवन किया हो, करवाया हो, सेवन करनेवालों की अनुमोदना की हो तो उनका मिच्छा मि दुक्कडम् ।

**3. हे त्रिभुवननेता ! मैंने यथाशक्ति आपके शासन की, मंदिर, प्रतिमाओं, श्रीशत्रुंजयादि तीर्थ, आगम और संघ की उपेक्षा की हो । देवद्रव्य, गुरुदव्य, ज्ञानद्रव्य, साधारणद्रव्य का भक्षण किया हो, रक्षा न करके उपेक्षा की हो उनका मिच्छा मि दुक्कडम् ।**

4. त्रिभुवन सुखकारी ! मैंने शक्ति अनुसार आपके समक्ष विधिपूर्वक चैत्यवंदन, देववंदन, प्रदक्षिणा, प्रणाम, पूजा, प्रार्थनादि नहीं की हो उनका मिच्छा मि दुक्कडम् ।

**5. हे त्रिभुवन हितकारी ! आपके मंदिर की 84 आशातनाओं में से कोई भी आशातना जानबूझकर अथवा अनजान में की हो उनका मिच्छा मि दुक्कडम् ।**

6. हे त्रिभुवनपति ! मैंने यथाशक्ति आपके पाँचों कल्याणक नहीं मनायें । पांचों कल्याणक की आराधना नहीं की हो, उनका मिच्छा मि दुक्कडम् ।

**7. हे त्रिभुवनबन्धु ! मैंने यथाशक्ति तन-मन-धन से सात क्षेत्रों की भक्ति नहीं की हो उनका मिच्छा मि दुक्कडम् ।**

8. हे निष्कारणबन्धु ! मैंने यथाशक्ति आपके प्रवचन, तीर्थ, संघ की उन्नति नहीं की हो उनका मिच्छा मि दुक्कडम् ।

**9. हे त्रिभुवनस्वामी ! मैंने जिनमंदिर निर्माण, जिनमूर्ति निर्माण, जिनेन्द्रभक्ति महोत्सव, अंजनशलाका, प्रतिष्ठा, रथयात्रा-जलयात्रा के वरघोड़े दीक्षा महोत्सव में जो भी विघ्न डाला हो, उनके लिए हृदय से मिच्छा मि दुक्कडम् ।**

10. हे मोक्षसुखदाता ! मैंने आपके वंदन-पूजनादि मोक्षप्राप्ति हेतु न कर भौतिक सुखों के लिए कर के आपकी घोर आशातना की हो उसके लिए हृदय से मिच्छा मि दुक्कडम् ।

**11. हे प्रभु ! मैंने यथाशक्ति छ' री पालित संघ नहीं निकाले । उपधान, उद्यापन, साधर्मिक वात्सल्य, संघपूजन, गुरुपूजन, ज्ञानपूजन नहीं किये, नहीं करवाये, उनका हृदय से मिच्छा मि दुक्कडम् ।**

12. हे मोक्षमार्गदर्शक ! शुद्ध देवगुरुधर्म का विनय, भक्ति बहुमान करना चाहिए वह नहीं किया, नहीं करवाया उसका हृदय से मिच्छा मि दुक्कडम् ।

**13. हे त्रिभुवन-भूषण ! मैंने यथाशक्ति सम्यग् प्रकार से ज्ञानाचार, दर्शनाचार, चारित्राचार, तपाचार और वीर्याचार का पालन नहीं किया, नहीं करवाया और करनेवालों की अनुमोदना नहीं की, उसका हृदय से मिच्छा मि दुक्कडम् ।**

14. हे त्रिभुव-नायक ! मैंने यथाशक्ति आपके आगम नहीं लिखे, नहीं लिखवाए, ज्ञानभंडार नहीं करवाये, उनकी रक्षा नहीं की, उसके लिए हृदय से मिच्छा मि दुक्कडम् ।

**15. हे त्रिभुवन पति ! मैंने यथाशक्ति आपके आगम की, गुणीजनों की, संघ की स्तुति-भक्ति नहीं की, उसके लिए हृदय से मिच्छा मि दुक्कडम् ।**

16. हे त्रिभुवन पति ! मैंने अन्य देव-देवियों को आप से अधिक महान माना, उनकी महिमा की, उनके मन्दिर-मूर्ति आदि बनवाए, उसके लिए हृदय से मिच्छा मि दुक्कडम् ।

**17. हे त्रिभुवन पति ! मैंने यथाशक्ति दान, शील, तप एवं भावधर्म की आराधना नहीं की, नहीं करवायी, उसके लिए हृदय से मिच्छा मि दुक्कडम् ।**

18. हे शरणागत वत्सल ! मैंने यथाशक्ति सुपात्रदान, अनुकम्पादान, अभयदान, धर्मदान ज्ञानदान उचितदान नहीं किया हो, उसके लिए हृदय से मिच्छा मि दुक्कडम् ।

**19. हे परोकार व्यसनी ! मैंने यथाशक्ति आदरपूर्वक संघपूजन, गुरुपूजन, ज्ञानपूजन नहीं किया हो, उसके लिए मिच्छा मि दुक्कडम् ।**

20. हे त्रिभुवन-वत्सल ! मैंने यथाशक्ति साधर्मिकों की भक्ति नहीं की, बहुमान नहीं किया, उनका उद्धार नहीं किया, संकट में उनको सहायता नहीं की, धर्मराधना में सहायता नहीं की हो, उसके लिए हृदय से मिच्छा मि दुक्कडम् ।

**21. हे प्रभु ! मैंने अविधि से सामायिक, प्रतिक्रमण, पौषध, जिनपूजा गुरुभक्ति आदि की हो, उसके लिए हृदय से मिच्छा मि दुक्कडम् ।**

22. हे वैराग्यनिधि ! भव (संसार) और भव के भोगों के प्रति चित्त में वैराग्य धारण नहीं किया, असार संसार को सारभूत, विषमय विषयों को अमृततुल्य माना हो उसके लिए हृदय से मिच्छा मि दुक्कडम् ।

**23. हे जगदाधार ! मैंने यथाशक्ति साध्वीजी और सतियों के शील की रक्षा नहीं की हो, उसके लिए मिच्छा मि दुक्कडम् ।**

24. हे जगत्पिता ! मैंने यथाशक्ति आपके प्रवचन का मालिन्य नहीं रोका हो, प्रवचन की हीलना की हो, करवायी हो अनुमोदना की हो उसके लिए मिच्छा मि दुक्कडम् ।

**25. हे दीनबन्धु ! आपके संघ और शासन का शत्रु बनकर**

**संघ और शासन का अनिष्ट किया हो उसके लिए अंतः करण से मिच्छा मि दुक्कडम् ।**

26. हे त्रिभुवनपति ! मैंने इस भव में और भूतकाल के भवों में जान-बुझकर-अनजान में, राग-द्वेष, अज्ञान-लोभ-प्रमादादि के अधीन बनकर मन-वचन-काया से छह काय जीवों का अशुभ किया हो, उनकी हिंसा की हो दूसरों से करवाई हो या अनुमोदना की हो उसका मिच्छा मि दुक्कडम् ।

**27. हे लोकप्रदीप ! आपके आगम विरुद्ध कुछ भी बोला, लिखा, लिखवाया हो उसके लिए मिच्छा मि दुक्कडम् ।**

28. हे प्रभु ! मैंने इस जन्म में या गतजन्मों में अन्य लोगों को देव-गुरु-धर्म की श्रद्धा से, व्रत-नियम-चारित्र से जिनवचन की श्रद्धा से भ्रष्ट किया हो उसके लिए अंतः करण से मिच्छा मि दुक्कडम् ।

**29. हे सर्वज्ञ प्रभु ! मैंने इस भव में तथा गतभवों में शास्त्र फाड़े हो, जलाये हो, शास्त्रों का अपमान किया हो, शास्त्रकारों का अपमान किया हो, यथाशक्ति आगमों का उद्धार नहीं किया हो उसके लिए मिच्छा मि दुक्कडम् ।**

30. हे अनंतगुणनिधान ! मुझे जैसा रस (interest) पौद्गलिक बातों में है, वैसा रस आपकी भक्ति में, गुरु की भक्ति में, ज्ञान की भक्ति में नहीं आया हो उसके लिए अंतः करण से मिच्छा मि दुक्कडम् ।

**31. हे मार्गदाता ! सन्मार्ग का नाश कर उन्मार्ग की स्थापना करके जगत् के जीवों को मैं उन्मार्ग में ले गया होऊं, उसके लिए सच्चे दिल से मिच्छा मि दुक्कडम् ।**

32. हे प्रभु ! मैंने जैन धर्म की लघुता की हो, जैनधर्म की निंदा हो, लोग बोधिदुर्लभ बने ऐसे नीच कार्य किये हो उसके लिए अंतः करण से मिच्छा मि दुक्कडम् ।

**33. हे सहजानंदी ! मैं देव-गुरु-धर्म की सेवा को गौण करके कंचन-कामिनी-कुटुम्ब की सेवा में लीन बना होऊं उसके लिए मिच्छा मि दुक्कडम् ।**

34. हे मोक्षसुखभोक्ता ! मैंने 19 दोषरहित कभी कायोत्सर्ग नहीं किया हो, 32 दोषरहित सामायिक नहीं की हो, तीव्रपश्चाताप सहित उपयोगपूर्वक प्रतिक्रमण नहीं किया हो, एकग्रचित्त से आपका नामस्मरण नहीं किया हो उसके लिए सच्चे दिल से मिच्छा मि दुक्कडम् ।

**35. हे लोकप्रदीप ! मैंने यथाशक्ति श्रुताध्ययन नहीं किया हो, पढ़कर दूसरों को नहीं पढ़ाया, सूत्र-अर्थ की अनुप्रेक्षा नहीं की, श्रुताध्ययन करते समय गुरु का विनय भक्ति-बहुमान नहीं किया हो, गुरु का नाम छुपाया हो, अकाल में ज्ञान पढा हो, उपधान-योगोद्वहन किये बिना पढा हो, उनका मिच्छा मि दुक्कडम् ।**

36. हे अनन्तगुणधारक ! मैंने विधिमार्ग का प्रतिपादन नहीं किया, अविधि का निषेध नहीं किया, विधि का पक्षपात

नहीं किया, विधिमार्ग में दूसरों को जोड़ने का प्रयत्न नहीं किया, विधिपूर्वक क्रिया करनेवालों की अनुमोदना-प्रशंसा नहीं की और मैंने अविधि से अनादरपूर्वक क्रियाएँ की हो उसके लिए सच्चे दिल से मिच्छा मि दुक्कडम् ।

**37. हे समतासागर ! मैंने संयम लेकर समता की साधना नहीं की, संसार का मोह नहीं छोड़ा हो उसका हृदय से मिच्छा मि दुक्कडम् ।**

38. हे क्षमामूर्ति ! मैं संयम लेकर क्षमाश्रमण कहलाया लेकिन क्षमामूर्ति नहीं बना होऊं उसका मिच्छा मि दुक्कडम् ।

**39. हे तपोमूर्ति ! दीक्षा लेकर भी भगवान की आज्ञानुसार तप करने के बदले बार-बार खाने-पीने में लम्पट बना होऊं उसका हृदय से मिच्छा मि दुक्कडम् ।**

40. हे सर्वज्ञ ! दीक्षाजीवन में स्वेच्छाचारी जीवन जीया, होऊं उसका हृदय से मिच्छा मि दुक्कडम् ।

**41. हे वीतराग परमात्मा ! संयम जीवन स्वीकार करने के बाद दश यतिधर्म का पालन नहीं किया । पाँच इन्द्रिय, मन, विषय और कषाय को काबू में नहीं रखा हो, उसके लिए अंतः करण से मिच्छा मि दुक्कडम् ।**

42. हे अभयदाता ! संयमजीवन में रसगारव, ऋद्धिगारव शातागारव में तल्लीन बनकर षट्काय की रक्षा करने में उपेक्षा की हो तथा संयम का निरतिचार पालन नहीं किया हो, उसके लिए हृदय से मिच्छा मि दुक्कडम् ।

**43. हे प्रभु ! दीक्षा लेकर उपसर्गों और परिषहों से ड़रकर आपके शासन की शोभा घटायी हो उसके लिए मिच्छा मि दुक्कडम् ।**

44. हे प्रभु ! मैं संयम लेकर पुष्ट आलंबन बिना, उत्सर्ग के स्थान में अपवाद का सेवन किया हो उसका अंतःकरण से मिच्छा मि दुक्कडम् ।

**45. हे प्रभु ! संयमजीवन में परनिन्दा, परदोषदर्शन, ईर्ष्या, स्वप्रशंसा में आनन्द आया हो, उसके लिए हृदय से मिच्छा मि दुक्कडम् ।**

46. हे कर्म विजेता ! दीक्षा ग्रहण कर गुरु के पास शिक्षा ग्रहण नहीं की हो उसका हृदय से मिच्छा मि दुक्कडम् ।

**47. हे प्रभु ! संयम ग्रहणकर मोक्ष की इच्छा को छोड़कर अन्य सत्कार, सन्मान, प्रसिद्धि, कीर्ति, स्वपूजादि की इच्छा की हो, लोकरंजन आदि का त्याग नहीं किया हो, उसके लिए हृदय से मिच्छा मि दुक्कडम् ।**

48. हे प्रभु ! गुरु भगवंत के पास शुद्धहृदय से, आलोचना नहीं की हो, उसका मिच्छा मि दुक्कडम् ।

**49. हे परमगुरु ! गुर्वाज्ञा (गुरु-आज्ञा) का अनादर किया, विलम्ब से आज्ञा मानी, आज्ञापालन करते समय मन में उद्वेग किया, उत्साह से आज्ञापालन नहीं किया हो, उसका हृदय से मिच्छा मि दुक्कडम् ।**

50. हे जगवत्सल ! मैंने संयम लेकर विधिपूर्वक अष्टप्रवचन-माता का सम्यग्पालन नहीं किया, आहारशुद्धि, वस्त्र-शुद्धि, पात्रशुद्धि, वसतिशुद्धि नहीं संभाली, दोषित आहारादि ग्रहण किया हो उसके लिए हृदय से मिच्छा मि दुक्कडम् ।

**51. हे परमोपकारी ! मैंने चार प्रकार की धर्मकथा न कर चार प्रकार की विकथा की हो, धर्मध्यानादि न कर अतिरौद्रध्यान किया हो, उसके लिए मिच्छा मि दुक्कडम् ।**

52. हे प्रभु ! मैंने मैत्री, प्रमोद, कारुण्य और माध्यस्थ, अनित्यादि बारह भावना, पाँच महाव्रत की पचीस भावनाओं से चित्त को भावित नहीं किया हो उसके लिए हृदय से मिच्छा मि दुक्कडम् ।

**53. हे तरणतारण जहाज ! मैंने मोक्षमार्ग पर आगे बढ रहे जीवों को सहायता नहीं की हो उसके लिए अंतः करण से मिच्छा मि दुक्कडम् ।**

54. हे प्रभु ! दूसरों को दीक्षा लेते रोका, दीक्षा ग्रहण करने के बाद छोडी, दीक्षा विरुद्ध कार्य किया, साधु-साध्वीजी को अपमानित किया, उनको कटु शब्द बोले, उनकी वसति जलायी, उनकों गाँव से बाहर निकाला हो, उसे लिए हृदय से मिच्छा मि दुक्कडम् ।

**55. हे अजर अमर प्रभो ! मैंने मृत्यु के मुख में जाते प्राणियों**

**को नहीं छुडाया, उनकी जीवदया नहीं की हो उसके लिए मिच्छा मि दुक्कडम् ।**

56. हे सर्वजीव-हितचिन्तक ! मैंने यथाशक्ति छ'री पालित संघ नहीं निकाले हो, संघ को ठहरने के लिए उत्तम व्यवस्था नहीं की हो, उसका हृदय से मिच्छा मि दुक्कडम् ।

**57. हे निःस्पृहशिरोमणि ! मैंने इस जन्म या गत जन्मों में धर्मद्रोह, संघद्रोह, शासनद्रोह, पितृद्रोह, भातृद्रोह, मित्रद्रोह आदि पाप कार्य किये हो, उसका हृदय से मिच्छा मि दुक्कडम् ।**

58. हे सर्वगुणसंपन्न ! मैंने अदर्शनीय का दर्शन, अप्रशंसनीय की प्रशंसा, अपठनीय का पठन, अभक्ष्य का भक्षण, अपेय का पान, आदि किया हो उसके लिए हृदय से मिच्छा मि दुक्कडम् ।

**59. हे प्रभु ! धर्मस्थानों में भी मैंने झगडा किया हो, असंयम का सेवन किया, अयतना पूर्वक वर्तन किया, दूसरों को भक्ति-क्रिया में अंतराय किया, शास्त्रविधि का पालन नहीं किया, सांसारिक कार्यों की चिन्ता की, कटुवचन बोले इत्यादि अयोग्य कार्य किये, उस के लिए मिच्छा मि दुक्कडम् ।**

60. हे प्रभु ! श्रावक जीवन में मैंने श्रावकाचार का बराबर पालन नहीं किया हो उसके लिए मिच्छा मि दुक्कडम् ।

**61. हे अचिन्त्यशक्तिमान ! मैंने आपके संघ में झगड़े करवाये, संघ में एकता करवाने हेतु प्रामाणिक प्रयत्न न किये, उसके लिए हृदय से मिच्छा मि दुक्कडम् ।**

62. हे परमानंदी ! मेरे गृहांगण में आए हुए श्री संघ सुसाधु-साध्वीजी व साधर्मिकों का सत्कार नहीं किया, हाथ जोड़कर `पधारो', नहीं कहा, उनका खूब अनादर किया, उनका हृदय मिच्छा मि दुक्कडम् ।

**63. हे प्रभु ! मैंने आहार-लंपट, रसलंपट, विषयलंपट बनकर बाह्य-अभ्यंतर तप नहीं किया, उसका हृदय से मिच्छा मि दुक्कडम् ।**

64. हे प्रभु ! संयम ग्रहणकर मैंने गुरु भगवंत से निरंकुश वर्तन किया हो, उसका हृदय से मिच्छा मि दुक्कडम् ।

**65. हे प्रभु । पुद्गल के संग में आसक्त बनकर मैंने कभी निःसंग बनने की इच्छा नहीं की हो, उसका हृदय से मिच्छा मि दुक्कडम् ।**

66. हे प्रभु ! मैंने अपनी आत्मा का कर्ममल दूर कर निर्मल बनने का विचार नहीं किया हो उसके लिए हृदय से मिच्छा मि दुक्कडम् ।

**67. हे अचिन्त्य चिन्तामणि ! मैंने उपकारियों पर अपकार किया, उपकारियों के उपकार भूल गया, उसके लिए सच्चे हृदय से मिच्छा मि दुक्कडम् ।**

68. हे प्रभु ! मैंने दूसरों के उत्कर्ष में ईर्ष्या की, उनकी सुख-संपत्ति का नाश किया, उनके लिए मिच्छा मि दुक्कडम् ।

**69. हे परोपकारी ! मैंने सुदेव-सुगुरु-सुधर्म को कुदेव-कुगुरु-कुधर्म तथा कुदेव-कुगुरु-कुधर्म को सुदेव-सुगुरु-सुधर्म माना, उसके लिए अन्तःकरण से मिच्छा मि दुक्कडम् ।**

70. झूठ बोलना भयंकर पाप है, फिर भी आवेश में आकर, लोभ के वश होकर, भय के कारण अथवा हँसी-मजाक में झूठ बोला हो, इसके लिए हृदय से पश्चात्ताप करता हूँ ।

**71. चोरी करना बड़ा अपराध है । चोरी करने से सामनेवाले को पीड़ा होती है, फिर भी बाल्यवय में चोरी की हो, स्कूल-कॉलेज की परीक्षा में तथा धन के लोभ से व्यापार आदि में चोरी की हो उसके लिए मैं हृदय से माफी मांगता हूँ ।**

72. आत्म स्वभाव में रमणता-ब्रह्मचर्य मेरा आत्मधर्म है, फिर भी मोह से परस्त्री व वेश्या आदि के साथ मैथुन सेवन किया हो, उसके लिए त्रिविध मिच्छा मि दुक्कडम् ।

**73. सोना-चांदी-हीरा-मोती-रुपये आदि परवस्तु है फिर भी ममता के वश होकर उसका परिग्रह किया हो उसके लिए हृदय से क्षमा मांगता हूँ ।**

74. क्रोध करना मेरा आत्मधर्म नहीं है, फिर भी स्वयं की इच्छापूर्ति न होने से अथवा धन के लोभ से मैंने क्रोध किया हो उनकी मैं क्षमा मांगता हूँ ।

**75. धन-संपत्ति, ज्ञान, तप आदि का अभिमान करने जैसा नहीं है फिर भी मोहवश मैंने अपने जीवन में गर्व किया हो, उसके लिए मैं हृदय से पश्चात्ताप करता हूँ।**

76. माया कपट करना पाप है, सरलता धर्म है. फिर भी धन के लोभ के कारण मैंने माया की हो, उसके लिए मैं हृदय से क्षमा मांगता हूँ।

**77. लोभ के अधीन होकर मैंने क्रोध किया हो, माया की हो, किसी के साथ दुर्व्यवहार किया हो, उसके लिए हृदय से मिच्छा मि दुक्कडम्।**

78. स्वादिष्ट भोजन में लालसा कर, धन, पत्नी, पुत्र, परिवार तथा शरीर के प्रति रागभाव कर मैंने जो भयंकर पाप किए हो, उसके लिए मैं क्षमा याचना करता हूँ।

**79. प्रतिकूल आहार, प्रतिकूल संयोग, प्रतिकूल वातावरण, दुश्मन आदि के प्रति द्वेषभाव कर मैंने जो पाप किए हैं उन पापों के लिए हृदय से पश्चात्ताप करता हूँ।**

80. आवेश में आकर, धन के लोभ से मैंने किसी के ऊपर झूठा आरोप लगाया हो, उसके लिए अन्तःकरणपूर्वक मिच्छामि दुक्कडम्।

**81. दूसरों के दोष बतलाकर मैंने दूसरों की निंदा की हो, उसके लिए हृदय से मिच्छामि दुक्कडम्।**

82. हे भवसमुद्रतारक ! किसी को अपने जाल में फंसाने के लिए मैंने मायापूर्वक झूठ बोलकर सामनेवाले के दिल को ठेस पहुँचाई हो तो मेरा वह पाप मिथ्या हो ।

**83. जड के प्रति रागभाव एवं जीवों के प्रति द्वेषभाव करके मैंने जो-जो पाप किए हो, उन सबके लिए हृदय से मिच्छामि दुक्कडम् देता हूँ ।**

84. जाने-अनजाने में मैंने देव-गुरु एवं धर्म की निंदा की हो, तो उसके लिए हृदय से मिच्छामि दुक्कडम् ।

**85. शत्रुंजय आदि महातीर्थों पर मैंने रात्रिभोजन, अभक्ष्य भक्षण, या अब्रह्म सेवन आदि पाप किया हो तो उन सब पापों के लिए अन्तःकरण से क्षमा याचना करता हूँ ।**

86. हे तरण तारण जहाज ! तारक परमात्मा के महाकल्याणकारी कल्याणक दिनों में, पर्व दिनों में एवं पर्वाधिराज जैसे महापर्व के दिनों में प्रभु की आज्ञा के विरुद्ध प्रवत्ति करके पापाचरण किया हो, उनके लिए हृदय से मिच्छामि दुक्कडम् ।

## 7 सुकृत अनुमोदना

**1. हे अनन्तगुणनिधान ! आपने भूतकाल के तीसरे भव में `सवि करुं शासन रसी' की भावनापूर्वक तीर्थंकर नामकर्म का बंध करके, अन्तिम भव में संयम स्वीकार कर, केवलज्ञान प्राप्ति के बाद भव्य जीवों के आत्मकल्याण हेतु शासन की स्थापना करनेवाले अनंत तीर्थंकर परमात्माओं की मैं अनुमोदना करता हूँ ।**

2. अनादिकाल से अपनी आत्मा पर लगे हुए घाति-अघाति आठ कर्मों का क्षय कर शाश्वतसुख को प्राप्त करनेवाले सिद्ध भगवंतों की मैं अनुमोदना करता हूँ ।

**3. स्वयं पंचाचार के पालक तथा अनेक आत्माओं को पंचाचार में जोड़नेवाले सभी आचार्य भगवंतों की मैं अनुमोदना करता हूँ ।**

4. स्वयं शास्त्राध्ययन करके अनेक शिष्यों को शास्त्राध्ययन करवानेवाले सभी उपाध्याय भगवंतों की मैं अनुमोदना करता हूँ ।

**5. स्वयं रत्नत्रयी की आराधना द्वारा मोक्षमार्ग को साधनेवाले एवं अनेक आत्माओं के सहायक बननेवाले सभी साधु भगवंतों की मैं अनुमोदना करता हूँ ।**

6. तीर्थंकर भगवंत प्ररुपित `उपन्नेइ वा विगमेइ वा धुवेइ वा' इस त्रिपदी के श्रवण मात्र से अद्‌भुत क्षयोपशम से

द्वादशांगी के रचयिता बुद्धिनिधान, अद्भुत विनय एवं समर्पण गुणधारक श्रीपुंडरीकस्वामी, श्रीगौतस्वामी आदि गणधर भगवंतों की मैं अनुमोदना करता हूँ ।

**7. चार सौ दिन के उपवासी श्री ऋषभदेव परमात्मा को सुपात्रदान देकर पारणा करानेवाले श्री श्रेयांसकुमार के सुपात्रदान की अनुमोदना करता हूँ ।**

8. हर्षोल्लासपूर्वक साधु भगवंत को घी वहोराते सम्यग्दर्शन को प्राप्त करनेवाले धन **सार्थवह** के सुपात्रदान की मैं अनुमोदना करता हूँ ।

**9. जंगल में भी भोजन के पूर्व अतिथिसत्कार की भावनावाले एवं अतिथि में साधु भगवंत के दर्शन से रोमांचित, भावपूर्वक सुपात्रदान देनेवाले नयसार के सुपात्रदान की मैं अनुमोदना करता हूँ ।**

10. पाँच मास व पच्चीस दिन के उपवासी वीरप्रभु को पारणा कराने वाली सौभाग्यशाली **चंदनबाला** के सुपात्रदान की मैं अनुमोदना करता हूँ ।

**11. सवालाख जिनमंदिर एवं सवा करोड़ जिनप्रतिमाओं का निर्माण करानेवाले सम्प्रति राजा की मैं अनुमोदना करता हूँ ।**

12. पाँच कोडी का खर्च कर अठारह पुष्पों से भाव पूर्वक प्रभुपूजा करनेवाले **नरवीर** की मै अनुमोदना करता हूँ ।

**13. शत्रुंजय के उद्धार में भावपूर्वक सात द्रम रुप अपना सर्वस्व अर्पण करनेवाले भीमा कुंडलीया की मैं अनुमोदना करता हूँ ।**

14. 18 देशों में जीव दया का पालन करानेवाले, करोडों सुवर्णमुद्राओं द्वारा साधर्मिकों का उद्धार करनेवाले, 1444 मंदिरों का निर्माण करनेवाले एवं शत्रुंजय-गिरनार तीर्थ के संघपति **श्रीकुमारपाल** राजा की मैं अनुमोदना करता हूँ ।

**15. देवविमान समान जिनमंदिरों के निर्माता, दर्शनमात्र से आंखों को आनंद देने वाली जिनप्रतिमाओं के निर्माता, विशाल संघ निकालनेवाले तथा सात बड़े ज्ञान भंडार बनानेवाले वस्तुपाल एवं तेजपाल के सुकृतों की मै अनुमोदना करता हूँ ।**

16. 12 वर्ष के दुष्काल में 1200 दानशाला खोलकर मृत्यु के मुख में जाने वाले मनुष्यों को बचानेवाले **जगडुशाह** की अनुमोदना करता हूँ ।

**17. 84 जिनमंदिर एवं हजारों जिनप्रतिमाओ के निर्माता, 32 (बतीस) वर्ष की युवावस्था में पत्नी प्रथमिनी के साथ गुरु भगवंत के पास आजीवन ब्रह्मचर्य का स्वीकारनेवाले पेथड़शा मंत्री की मैं अनुमोदना करता हूँ ।**

18. आठ पत्नियों को लग्न के पहले दिन ही वैराग्यपोषक उपदेश द्वारा संयम रंग में रंगने वाले **जंबूस्वामी** की मैं अनुमोदन करता हूँ ।

**19. काम के आसनों से चित्रित चित्रशाला, षड् विगईयुक्त भोजन, पूर्वपरिचित वेश्या की प्रार्थना होने पर भी जिनके रोम में भी विकारभाव पैदा न हुआ, ऐसे स्थूलभद्रस्वामी की मैं अनुमोदना करता हूँ ।**

20. अतिरुपवती रुक्मी कन्या को वैराग्यरस द्वारा संयमी बनानेवाले **वज्रस्वामी** की मैं अनुमोदना करता हूँ ।

**21. सुवर्णलंका के अधिपति रावण की प्रार्थना के सामने अतिदृढ़ बनकर शीलपालन करनेवाली महासती सीता की मैं अनुमोदना करता हूँ ।**

22. जिनके शील प्रभाव से शूली का भी सिंहासन बन गया ऐसे **सुदर्शन** श्रेष्ठी की मैं अनुमोदना करता हूँ ।

**23. पत्नी को कृष्णपक्ष में संपूर्ण ब्रह्मचर्य पालन का एवं पति को शुक्लपक्ष में संपूर्ण ब्रह्मचर्य पालन का नियम होने से परस्पर नियम का भंग न हो, अतः यावज्जीवपर्यन्त मन-वचन-काया से संपूर्ण ब्रह्मचर्य पालक विजय शेठ एवं विजया शेठाणी की मैं अनुमोदना करता हूँ ।**

24. विवाह दिन से 22 वर्ष तक पति का विरह होने पर भी मन से भी परपुरुष का विचार नहीं करनेवाली महासती **अंजना** की मैं अनुमोदना करता हूँ ।

**25. दीक्षा ग्रहण के बाद साढे बारह वर्षपर्यन्त घोर तपश्चर्य करनेवाले वीर प्रभु की मैं अनुमोदना करता हूँ ।**

26. 11,80,645 मासक्षमण के तपस्वी नंदन राजर्षि की मैं अनुमोदना करता हूँ ।

**27. छट्ठ के पारणे छट्ठ तप करके काया की माया को दूर करनेवाले धन्ना अणगार की मैं अनुमोदना करता हूँ ।**

28. भरत महाराजा की ओर से दीक्षा की अनुमति नहीं मिलने पर निरंतर 60,000 वर्ष तक आयंबिल तप

करनेवाली तपस्विनी महासती सुंदरी की मैं अनुमोदना करता हूँ ।

**29. छट्ठ के पारणे छट्ठ तप कर उत्साहपूर्वक ग्लान मुनि की वैयावच्च करनेवाले नंदिषेण मुनि की मैं अनुमोदना करता हूँ ।**

30. 180 उपवास द्वारा अकबर बादशाह को आश्चर्यचकित करनेवाली चंपा श्राविका की मैं अनुमोदना करता हूँ ।

**31. ऊँगली में से अंगुठी निकलने पर शुभ भावनाओं से केवलज्ञान प्राप्त करनेवाले भरत महाराजा की मैं अनुमोदना करता हूँ ।**

32. शादी के समय हस्तमिलन की क्रिया समय ``कल संयम लेकर कषायों और इन्द्रियों पर विजय प्राप्त करुंगा'' इस प्रकार शुभ भावना से भावित बनकर केवलज्ञान प्राप्त करनेवाले **गुणसागर** श्रेष्ठी एवं उनकी आठ पत्नियों की मैं मैं अनुमोदना करता हूँ ।

**33. सिंहासन पर बैठे-बैठे शुभ भावना से भावित बनकर केवलज्ञान प्राप्त करनेवाले पृथ्वीचन्द्र राजा की मैं अनुमोदना करता हूँ ।**

34. यन्त्र में पीलाते हुए समताभाव से केवली बनकर मोक्ष में जानेवाले श्रीखंधकसूरि के 500 शिष्यों की मैं अन्तःकरण से अनुमोदना करता हूँ ।

**35. राजा के आदेश से संपूर्ण शरीर की चमडी उतरवानेवाले समता सागर श्रीखंधक मुनि की अन्तः करण से मैं अनुमोदना करता हूँ ।**

36. सोमिल श्वसूर द्वारा मस्तक पर जलते हुए अंगारे डालने पर भी श्वशूर के प्रति भी क्षमा भावना रखने वाले गजसुकुमाल महामुनि की मैं अन्तः करण से अनुमोदना करता हूँ ।

**37. संवत्सरी के दिन भात में तपस्वी महात्माओं द्वारा थूंकने पर भी उपशमभाव रखनेवाले कूरगडु महामुनि की मैं अन्तः करण पूर्वक अनुमोदना करता हूँ ।**

38. लकडी के प्रहार में भी समताभाव से केवलज्ञान प्राप्त करनेवाले दृढ़प्रहारी महात्मा की मैं अन्तः करण से अनुमोदना करता हूँ ।

**39. साढे तीन करोड श्लोकों की रचना द्वारा ज्ञानसाधना करनेवाले कलिकाल सर्वज्ञ आचार्यदेव श्री हेमचन्द्र-सूरीश्वरजी म. की मैं अन्तः करण से अनुमोदना करता हूँ ।**

40. 1444 (चौदह सौ चौआलीस) ग्रन्थों की रचना कर अपूर्व ज्ञानसाधना करनेवाले आचार्यदेव श्रीहरिभद्र सूरीश्वरजी महाराजा की मैं अन्तःकरण से अनुमोदना करता हूँ ।

**41. आगमोक्त पदार्थों का समन्वय करके अनेक ग्रन्थों के निर्माता, महामहोपाध्याय श्रीयशोविजयजी महाराजा की मैं अन्तःकरण पूर्वक अनुमोदना करता हूँ ।**

42. 500 धर्मग्रन्थों का सर्जन करनेवाले पू. वाचकवर्य श्री उमास्वातिजी महाराजा की अन्तःकरणपूर्वक मैं अनुमोदना करता हूँ.

**43. दीक्षित पुत्र मनक के आत्मकल्याण हेतु श्रीदशवैकालिक सूत्र की रचना करने वाले चौदह पूर्वधर श्रीशय्यंभाव-सूरीश्वरजी म. की मैं अन्तः करणपूर्वक अनुमोदना करता हूँ।**

44. ``स्वाध्याय प्रेमी'' दुर्बलिका पुष्पमित्र महात्मा की मैं अन्तः करण से अनुमोदना करता हूँ।

**45. वीर प्रभु के प्रति भक्ति से अपने प्राण न्यौछावर करनेवाले सुनक्षत्र और सर्वानुभूति महात्मा की मैं अनुमोदना करता हूँ।**

46. डंक देनेवाले चंडकौशिक के प्रति जिनको द्वेष नहीं है और भक्ति करनेवाले इन्द्र के प्रति राग नहीं है ऐसे वीर प्रभु की मैं अनुमोदना करता हूँ।

**47. उपसर्ग करने वाले कमठ के प्रति द्वेष नहीं है और भक्ति करनेवाले धरणेन्द्र के प्रति राग नहीं है, उन समता साधक पार्श्वनाथ प्रभु की मैं अनुमोदना करता हूँ।**

48. अष्टापद तीर्थ पर परमात्म भक्ति से तीर्थंकर नाम कर्म का बंध करनेवाले रावण की मैं अन्तःकरण से अनुमोदना करता हूँ।

**49. अष्टापद तीर्थ की रक्षा के लिए प्राणों का बलिदान देनेवाले सगर चक्रवर्ती के 60,000 पुत्रों की मैं हृदय से अनुमोदना करता हूँ।**

50. बाल्यवय में दीक्षा अंगीकार करके जिनशासन की प्रभावना करनेवाले वज्रस्वामी महात्मा की मैं हृदय से अनुमोदाना करता हूँ।

**51. इरियावहियं प्रतिक्रमण करते समय 'पणगदग मट्टी' पद की विचारधारा में तीव्र पश्चात्ताप से केवलज्ञान प्राप्त करनेवाले अइमुत्ता अणगार की मैं अन्तः करण से अनुमोदना करता हूँ।**

52. भरत चक्रवर्ती का नाटक करते-करते केवलज्ञान प्राप्त करनेवाले अषाढाभूति महात्मा की मैं हृदय से अनुमोदना करता हूँ।

**53. विशाल राज्य छोड़कर संयम अंगीकार कर कर्मनिर्जरा से केवलज्ञान प्राप्त करनेवाले श्रीप्रसन्नराजर्षि की मैं अनुमोदना करता हूँ।**

54. मोदक वहोरानेवाली पद्मिनी स्त्री के सामने नीचे दृष्टि रखकर खड़े महात्मा को देख केवलज्ञान प्राप्त करनेवाले **इलाचीकुमार** की मैं हृदय से अनुमोदना करता हूँ।

**55. श्रेणिक महाराजा द्वारा राज्य मिलने पर मी राज्य का अस्वीकार कर संयम स्वीकार करनेवाले बुध्धिनिधान अभयकुमार की मैं हृदय से अनुमोदना करता हूँ।**

56. संयमजीवन अंगीकार कर 500 साधु भगवंतों की वैयावच्च करनेवाले बाहु और सुबाहु मुनिराज की मैं हृदय से अनुमोदना करता हूँ।

**57. वीर प्रभु की भक्ति हेतु भावपूर्वक आहार-पानी वहोरकर लानेवाले लोहार्य मुनि की मैं हृदय अनुमोदना करता हूँ।**

58. माता के आनंद हेतु दृष्टिवाद पढने का निर्णय कर संयम स्वीकार कर अपने कुटुम्ब उद्धार करनेवाले आर्यरक्षितसूरीश्वरजी महाराजा की मैं अनुमोदना करता हूँ ।

**59. संयम के प्रति तीव्र रागभाववाले कृष्ण महाराजा की मैं अनुमोदना करता हूँ ।**

60. गृहस्थावस्था में फूलों की शय्या पर सोने वाले और दीक्षा के पश्चात् घोर तपश्चर्या करके अंत में वैभारगिरि पर अनशन कर सर्वार्थसिद्ध विमान में पैदा हुए शालिभद्र महामुनि की मैं अन्तःकरण से अनुमोदना करता हूँ ।

**61. कडवी तुंबडी का उपभोग कर समाधि मृत्यु के माध्यम से सर्वार्थसिद्ध विमान में पैदा हुए धर्मरुचि अणगार की मैं अन्तःकरण से अनुमोदना करता हूँ ।**

62. धगधगायमान शिला पर अनशन स्वीकार कर अपूर्वसमता-साधक अरणिक मुनि की मैं हृदय से अनुमोदना करता हूँ ।

**63. भावपूर्वक 700 वर्ष तक 16-16 रोगों को समभावपूर्वक सहन करनेवाले सनत्कुमार राजर्षि की मैं अन्तःकरण से अनुमोदन करता हूँ ।**

64. वीरप्रभु ने जिनकी सामायिक एवं साधर्मिक भक्ति की प्रशंसा की ऐसे पुणिया श्रावक की मैं अनुमोदना करता हूँ ।

**65. जिनशासन के प्रति तीव्र श्रद्धा रखनेवाली सुलसा श्राविका की मैं हृदय से अनुमोदना करता हूँ ।**

66. जिनाज्ञानुसार अंजनशलाका, प्रतिष्ठा, दीक्षा महोत्सव, गुरु भगवंतों के नगर प्रवेश में उदारता पूर्वक सद्व्यय करनेवाले पुण्यात्माओं की हृदय से अनुमोदना करता हूँ ।

**67. नूतन जिनमंदिर का निर्माण करानेवाले पुण्यात्माओं की मैं अन्तः करण से अनुमोदना करता हूँ ।**

68. श्री सिद्धगिरि की विधिपूर्वक नवाणु यात्राएं एवं चौविहार छट्ठपूर्वक सात यात्राएं करनेवालों की मैं अन्तःकरण से अनुमोदना करता हूँ ।

**69. बह्मचर्य का विशुद्ध पालन करनेवालों की मैं भावपूर्वक अनुमोदना करता हूँ ।**

70. पाँच इन्द्रिय, चार कषाय, नौ नोकषाय एवं दस संज्ञाओं का वशीभूत करनेवाले महात्माओं की मैं भावपूर्वक अनुमोदना करता हूँ ।

**71. अनन्ती उत्सर्पिणी-अवसर्पिणी में हुए अनन्त तीर्थंकर एवं उनकी निश्रा में रहे भव्यजीवों के जिनाज्ञानुसार जो भी सुकृत किये हो उनकी मैं अन्तः करण पूर्वक अनुमोदना करता हूँ ।**

8

# समाधि-प्रेरक गीत

## अरिहंतों को नमस्कार ।

अरिहंतों को नमस्कार, श्री सिद्धों को नमस्कार,
आचार्यों को नमस्कार, उपाध्यायों को नमस्कार ।
जग में जितने साधु हैं, मैं सबको वंदू बार बार ।
अरिहंतों को.....।

ऋषभ,अजित,संभव अभिनन्दन,
सुमति पद्म सुपार्श्व जिनराज ।
चन्द पुष्प, शीतल श्रेयांस नमूं,
नमूं वासुपुज्य पूजित सुरराज ।
विमल अनन्त धर्म जश उज्ज्वल,
शांति कुंथु अरु मल्लि मनोहर,
मुनिसुव्रत नमि नेमी पार्श्व,
प्रभु वर्द्धमान पद पुष्प चढ़ाय ।
चौबींसों के चरण कमल में, वन्दन बार-बार ।।
अरिहंतों को....।

जिसने राग-द्वेष कामादिक जीते, सब जग सारा जान लिया ।
सब जीवों को मोक्ष मार्ग का, निःस्पृह हो उपदेश दिया ।
बुद्ध, वीर, जिन, हरिहर, या पैगम्बर हो अवतार ।
सबके चरण कमल में मेरा, वन्दन होवे बार-बार ।।
अरिहंतों को....।

## 9 मैत्री भाव का पावन झरना

मैत्री भाव का पावन झरना, मेरे हृदय में बहा करें ।
मंगल होवे सकल विश्व का, ऐसी भावना बनी रहें ।।
गुण से पुरण गुणी जन देख के, हर्ष भरा मन नृत्य करें ।
उन संतों के चरण कमल में, गुण ग्रहण का भाव रहें ।।
दीन दुःखी जीवों पर मेरे, उर से करुणा स्त्रोत वहें ।
करुणा पूरण आँखों में से, अश्रु का शुभ स्त्रोत बहें ।।
भव अटवी में भूले भटके, जीवों का पथ दीप बनूं ।
करे उपेक्षा उस मानव की, तो भी समता चित्त धरुं ।।
निर्मल भावना मुक्ति पथ की, मानव जीवन में लाएँ ।
वैर-जहर का भाव छोङ, जग नित्य नये मंगल गाएँ ।।

## 10 उठ-उठ रे म्हारा ज्ञानी रहे जीवड़ा

**(तर्जः उड़ उड़ रे म्हारा काला कागला)**

उठ उठ रे म्हारा ज्ञानी रे जीवड़ा,
दो घड़ी प्रभु रो भजन करो ।।टेर।।

प्रभु भजना सूं ज्ञान मिले है,
प्रभु सम तूं बणजा रे जीवड़ा ।।1।।

प्रभू भजना सूं मैल धूपे है,
करमा रो कोड़ कटे रे जीवड़ा ।।2।।

प्रभु भजना सूं शांति मिले है,
प्रभु सूं तार जुड़े रे जीवड़ा ।।3।।

प्रभु भजना सूं द्वेष मिटे हैं,
राग रो रंग हटे रे जीवड़ा ।।4।।

प्रभु भजना सूं दोष टले है,
पद अरिहंत मिले रे जीवड़ा ।।5।।

प्रभु भजना सूं दारिद्र जावे,
सुख-संपत पावे जीवड़ा ।।6।।

## 11 मिलता है सच्चा सुख केवल

मिलता है सच्चा सुख केवल, भगवान तुम्हारे चरणों में ।
यह विनती है पल-पल क्षण-क्षण, रहे ध्यान तुम्हारे चरणों में ।।

चाहे वैरी सब संसार बने, चाहे मौत गले का हार बने ।
चाहे जीवन मुझ पर भार बने, रहे ध्यान तुम्हारे चरणों में ।।

चाहे कष्टों ने आ घेरा हो, चाहे चारो और अंधेरा हो ।
पर चित्त में प्रभु का डेरा हो, रहे ध्यान तुम्हारे चरणों में ।।

चाहे कांटों पर मुझे चलना हो, चाहे अग्नि में जलना हो ।
चाहे छोड़ के देश निकलना हो, रहे ध्यान तुम्हारे चरणों में ।।

जिह्वा पर तेरा नाम रहे, तेरा ध्यान सुबह और शाम रहे ।
यह कामना आठों धाम रहे, रहे ध्यान तुम्हारे चरणों में ।।

## 12 जब प्राण तन से निकले

इच्छा है मेरी भगवन्, जब प्राण तन से निकले ।
मुख से कहूँ मैं अर्हम्, जब प्राण तन से निकले ।। टेर।।

होकर निःशल्य सर्वथा, पंडित मरण में मरना ।
त्यागूँ मैं पानी भोजन, जब प्राण तन से निकले ।।1।।

अनबन अगर किसी से, जीवन में हो गई है ।
उससे करूँ क्षमापन, जब प्राण तन से निकले ।।2।।

तज मोह माया ममता, मन में बसा के समता ।
तेरा करूँ मैं सुमिरण, जब प्राण तन से निकले ।।3।।

जय वीतराग जिनवर, जय वीतराग जिनवर ।
लग जाए रट पल-पल, जब प्राण तन से निकले ।।4।।

गुरु जन मेरे निकट हो, मुझको सुनाये वाणी ।
बन जाए उच्च जीवन, जब प्राण तन से निकले ।।5।।

शांति के साथ एक दम, मेरी लगे समाधि ।
बस यही है चाह, **'चन्दन'**, जब प्राण तन से निकले।।6।।

### जरा सोचो...

जिन्दगी भर का कमाया, साथ में क्या जायेगा ।
इस धरा का इस धरा पर, सब पड़ा रह जायेगा ।।

बीतने वाले घड़ी को, कौन लौटा पायेगा ।
यह जो सुअवसर खो दिया, तो अंत में पछतायेगा ।।

## 13 उठ जाग मुसाफिर भोर भई

उठ जाग मुसाफिर भोर भई, अब रैन कहाँ जो सोवत है ।
जो सोवत है सो खोवत है, जो जागत है सो पावत है ।।
उठ जाग मुसाफिर....।

उठ नींद से अँखियां खोल जरा, और अपने प्रभु से ध्यान लगा ।
यह प्रीत करन की रीत नहीं, प्रभु जागत है तूं सोवत है ।।
उठ जाग मुसाफिर....।

जो कल करना सो आज कर ले, जो आज करना सो अब कर ले ।
जब चिड़िया ने चुग खेत लिया, फिर पछताये क्या होवत है।।
उठ जाग मुसाफिर.....।

नादान भुगत अपनी करणी, पापी पाप से चैन कहां ।
जब पाप की गठरी शीश धरी, अब शीश पकड क्यों रोवत है।।
उठ जाग मुसाफिर.....।

## 14 भक्ति कराता छूटे म्हारो प्राण

भक्ति करता छूटे म्हारां प्राण,
प्रभुजी एवो मांगू छूं ।
रहे जन्म-जन्म तारो साथ,
प्रभु जी एवु मांगू छूं ।। टेरे ।।

तारो मुखड़ो मनोहर जोया करुं,
रात दिवस रटण थारों करिया करूं ।

श्वासों श्वास रहे तारों ध्यान,
प्रभु जी एवु मांगू छूं ।।

म्हारी आशा निराशा करशो नहीं,
म्हारा अवगुण हैय्या मां धरशो नहीं ।
अंत समय रहे तारों ध्यान,
प्रभुजी एवु मांगू छूं ।।

तारी भक्ति नो रंग मने लागी गयो,
भय जन्म-मरण नो भागी गयो ।
दोड्यो आऊं हूँ तारे द्वार,
प्रभुजी एवु मांगू छूं ।।

म्हारा पाप ने ताप समावी देजो,
तारा सेवक ने पार उतारी देजो,
ए तो अंतरनी अभिलाष,
प्रभु जी एवु मांगू छूं ।।

दर्शन, ज्ञान चरित्र प्रभु मुझने मिले,
एवी आशा धरू प्रभु आप कने ।
आपो शिवपुर नो संगात,
आपो मुक्तिपुरी ना वास,
प्रभु जी एवु मांगू छूं ।।

## 15 जिह्वा पर हो नाम तुम्हारा..।

जिह्वा पर हो नाम तुम्हारा, प्रभुवर ऐसी भक्ति दो ।
समभावों से कष्ट सहूं सब, मुझ में ऐसी शक्ति दो ।।
समभावों से....।

जिन जन्मों में कर्म किये, वो आज उदय में आये हैं ।
कष्टों का कुछ पार नहीं, जो वो मुझ पर मंडराये हैं ।
डिगे न मन मेरा समता से, चरणों में अनुरक्ति दो ।।1।।
समभावों से....।

कायिक दर्द भले बढ़ जायें, किन्तु मन में क्षोभ न हो ।
रोम-रोम भले पीड़ित हो, किन्तु मन विक्षुब्ध न हो ।
दीनभाव नहीं आवे मन में, ऐसी शुभ अभिव्यक्ति दो ।।2।।
समभावों से....।

## 16 ऐसी कृपा हो भगवन्

ऐसी कृपा हो भगवन्, जब प्राण तन से निकले ।
होवे समाधि पूर्ण तेरा, नाम मुख से निकले-2।।

पत्नी पुत्र परिजन, हैं जो कुटुम्बी सारे,
उनसे ममत्व छूटे, जब प्राण तन से निकले ।।

गुरुदेव पास में हो, उपदेश दे रहे हों,
सुनते ही सुनते उनको, आत्म बदन से निकले ।।

कोई न शत्रु मेरा, दुश्मन न मैं किसी का,
फिर भी जो कोई होवे, वह भाव मन से निकले ।।
जब प्राण....।

दुष्कर्म दुःख दिखावें या रोग शोक घेरे,
प्रभु ध्यान नाहीं छूटे जब प्राण तन से निकले ।।

इच्छा क्षुधा तृषा भी, होवे जो उस घड़ी में ।
उसका भी त्याग कर दूं, जब प्राण तन से निकले ।।

जग में न चित्त हो मेरा, एक ध्यान हो तुम्हारा,
नवकार जपते-जपते, आत्मा बदन से निकले ।। जब प्राण....।
यह भावना है मेरी, चाहूं सदा यहीं मैं,
समभाव पूर्ण चित्त हो, जब प्राण तन से निकले ।।

## 17 अब सौंप दिया इस जीवन का

अब सौंप दिया इस जीवन का, सब भार तुम्हारे हाथों में ।
है जीत तुम्हारे हाथों में, और हार तुम्हारे हाथों में ।।

मेरा निश्चय बस एक यही, एक बार तुम्हें पा जाऊँ मैं ।
अर्पण कर दूं दुनियाँ भर का, सब भार तुम्हारे चरणों में ।।1।।

जो जग में रहूं तो ऐसे रहूं, ज्यों जल में कमल का फूल रहे ।
मेरे गुण दोष समर्पित हो, भगवान तुम्हारे चरणों में ।।2।।

यदि मानव का मुझे जन्म मिले, तो तव चरणों का पुजारी बनूं ।
इस पूजक की एक-एक रग का, हो तार तुम्हारे हाथों में ।।3।।

जब-जब संसार का कैदी बनूं, निष्काम भाव से कर्म करूँ ।
फिर अंत समय में प्राण तजूं, निराकार तुम्हारों हाथों।।4।।

मुझमें तुझमें बस भेद यही, मैं नर हूँ तुम नारायण हो ।
मैं हूँ संसार के हाथों में, संसार तुम्हारे हाथों में ।।5।।

## 18 जब प्राण तन से निकले

भगवान समय हो ऐसा, जब प्राण तन से निकले,
शुद्धातम हो मेरा और मोह मन से निकले 1

सातो व्यसन को तजकर मैं काम-क्रोध छोडुं,
माया व लोभ मेरे, अंतःकरण से निकले 2

मुनिराज मेरे सन्मुख, उपदेश दे रहे हैं,
उपदेश सुन कषाये, मेरे बदन से निकले 3

तेरी शांत छबी निहालुं, मेरे हृदय के भीतर,
तुभ्यं नमामि सततं, आदेश मुख से निकलें 4

पूरे हो भाव दिल के, प्रेमी कहे जवाहर,
नवकार पढते पढते, ये प्राण तन से निकले 5

एकाग्र चित्त से मैं, धरता हूँ ध्यान तेरा,
अरिहंत नाम हृदये, मेरे वचन से निकले 6

## 19 जब प्राण तन से निकले

ऐसी दशा हो भगवान्, जब प्राण से निकले
गिरीराज की हो छाया, मन में न होवे माया
तप से हो शुद्ध काया जब प्राण तन से निकले ..... 1

उर में न मान होवे, दिल एकतान होवे,
तुम चरण ध्यान होवे जब प्राण तन से निकले ..... 2

संसार दुःख हरणां, जैन धर्म का हो शरणां,
हो कर्म भर्म खरना जब प्राण तन से निकले ..... 3

अनशन हो सिद्धवट हो, प्रभु आदि देव घट हो,
गुरुराज भी निकट हो जब प्राण तन से निकले ..... 4

यह दान मुझके दीजे, इतनी दया तो कीजे,
अरजी तिलक की लीजे जब प्राण तन से निकले ..... 5

## 20 अमृतवेल की सज्झाय

चेतन ज्ञान अजुवालीए, टालीए मोह संताप रे,
चित्त डमडोलतुं वालीए, पालीए सहज गुण आप रे...चेतन.।1।।

उपशम अमृत रस पीजीए, कीजीए साधु गुणगान रे,
अधम वयणे नवि खीजीए, दीजीये सज्जनने मान रे, चेतन.।।2।।

क्रोध अनुबंध नवि राखीए, भाखीये वयण मुख साच रे,
समकित रत्न रुचि जोडीये, छोडीये कुमति मति काच रे. चेतन.।।3।।

शुद्ध परिणामने कारणे, चारनां शरण धरे चित्त रे,
प्रथम तिहां शरण अरिहंतनुं, जेह जगदीश जगमित्त रे, चेतन.।।4।।

जे समवसरणमां राजतां, भांजता भविक संदेह रे,
धर्मना वचन वरसे सदा, पुष्करावर्त जिम मेह रे...चेतन.।।5।।

शरण बीजुं भजे सिद्धनुं, जे करे कर्म चकचूर रे,
भोगवे राज शिवनगरनुं, ज्ञान आनंद भरपूर रे...चेतन.।।6।।

साधुनुं शरण त्रीजुं धरे, जेह साधे शिव पंथ रे,
मूल उत्तर गुणे जे वर्या, भव तर्या भाव निर्ग्रंथ रे...चेतन.।।7।।

शरण चोथुं धरे धर्मनुं, जेहमां वर दया भाव रे,
जेह सुख हेतु जिनवर कह्यो, पाप जल तरवा नाव रे. चेतन.।।8।।

चारना शरण ए पडिवजे, वली भजे भावना शुद्ध रे,
दुरित सवि आपणा निंदीये, जेम होये संवर वृद्धि रे. चेतन.।।9।।

इहभव परभव आचर्यां, पाप अधिकरण मिथ्यात्व रे,
जे जिनाशातनादिक घणां, निंदीये तेह गुण घात रे,चेतन.।।10।।

गुरुतणां वचन जे अवगणी, गुंथीया आप मत जाल रे,
बहु परे लोकने भोलव्यां, निंदीये तेह जंजाल रे...चेतन. ।।11।।

जेह हिंसा करी आकरी, जेह बोल्या मृषावाद रे,
जेह परधन हरी हरखियां, कीधलो काम उन्माद रे. चेतन.।।12।।

जेह धन धान्य मूर्छा धरी, सेविया चार कषाय रे,
रागने द्वेषने वश हुआ, जे कीयो कलह उपाय रे...चेतन.।।13।।

झुठ जे आल परने दिया, जे कर्या पिशुनता पाप रे,
रति अरति निंद मायामृषा, वलीय मिथ्यात्व संताप रे. चेतन.।।14।।

पाप जे एहवा सेवियां, तेह निंदीये त्रिहुं काल रे,
सुकृत अनुमोदना कीजीये, जिम होये कर्म विसराल रे. चेतन.।।15।।

विश्व उपकार जे जिन करे, सार जिन नाम संयोग रे,
तेह गुण तास अनुमोदीये, पुण्य अनुबंध शुभयोग रे. चेतन.।।16।।

सिद्धनी सिद्धता कर्मना, क्षय थकी उपनी जेह रे,
जेह आचार आचार्यनो, चरण वन सिंचवा मेह रे...।।17।।

जेह उवज्झायनो गुण भलो, सूत्र सज्झाय परिणाम रे,
साधुनी जे वली साधुता, मूल उत्तर गुणधाम रे. चेतन.।।18।।

जेह विरति देश श्रावक तणी, जे समकित सदाचार रे,
समकित दृष्टि सुरनर तणो, तेह अनुमोदिये सार रे. चेतन.।।19।।

अन्यमां पण दयादिक गुणो, जेह जिनवचन अनुसार रे,
सर्व ते चित्त अनुमोदिये, समकित बीज निरधार रे. चेतन.।।20।।

पाप नवि तीव्र भावे करे, जेहने नवि भव राग रे,
उचित स्थिति जेह सेवे सदा, तेह अनुमोदवा लाग रे.चेतन.।।21।।

थोडलो पण गुण परतणो, सांभली हर्ष मन आण रे,
दोष लव पण निज देखतां, निर्गुण निजातमा जाण रे. चेतन.।।22।।

उचित व्यवहार अवलंबने, एम करी स्थिर परिणाम रे,
भाविये शुद्ध नय भावना, पापनाशय तणुं ठाम रे...चेतन.।।23।।

देह मन वचन पुद्गल थकी, कर्मथी भिन्न तुज रुप रे,
अक्षय अकलंक छे जीवनुं, ज्ञान आनंद स्वरुप रे. चेतन.।।24।।

कर्मथी कल्पना उपजे, पवनथी जेम जलधि वेल रे,
रुप प्रगटे सहज आपणुं, देखता दृष्टि स्थिर मेल रे. चेतन।।25।।

धारतां धर्मनी धारणा, मारतां मोहवड चोर रे,
ज्ञानरुचि वेल विस्तारतां, वारतां कर्मनुं जोर रे. चेतन.।।26।।

राग विष दोष उतारता, झारता द्वेष रस शेष रे,
पूर्व मुनि वचन संभारता, वारता कर्म निःशेष रे....चेतन.।।27।।

देखीये मार्ग शिव नगरनो, जे उदासीन परिणाम रे,
तेह अणछोडता चालीये, पामीये जेम परमधाम रे. चेतन.।।28।।

श्री नयविजय गुरु शिष्यनी, शीखडी अमृतवेल रे,
एह जे चतुर नर आदरे, ते लहे `सुयश' रंग रेल रे. चेतन.।।29।।

# 21 पुण्य प्रकाश का स्तवन

## दुहा

सकळ सिद्धिदायक सदा, चोविशे जिनराय,
सद्गुरु स्वामीनी सरस्वती, प्रेमे प्रणमुं पाय । ।।1।।

त्रिभुवनपति त्रिशला तणो, नंदन गुण गंभीर
शासन नायक जग जयो, वर्धमान वडवीर । ।।2।।

एक दिन वीर जिणंदने, चरणे करी प्रणाम,
भविक जीवना हित भणी, पूछे गौतम स्वाम । ।।3।।

मुक्ति मारग आराधीए, कहो किण परे अरिहंत,
सुधा सरस तव वचन रस, भाखे श्री भगवंत । ।।4।।

अतिचार आलोइए, व्रत धरीए गुरु साख,
जीव खमावो सयल जे, योनि चोराशी लाख । ।।5।।

विधिशुं वळी वोसिरावीए, पापस्थानक अढार,
चार शरण नित्य अनुसरो, निंदो दुरित आचार । ।।6।।

शुभकरणी अनुमोदीए, भाव भलो मन आण,
अणसण अवसर आदरी, नवपद जपो सुजाण । ।।7।।

शुभगति आराधन तणा, ए छे दश अधिकार,
चित्त आणीने आदरो, जेम पामो भवपार । ।।8।।

## ढाळ-1

# (1) अतिचार आलोचना

**(रागः सिद्धचक्र पद वंदो)**

ज्ञान दरिसण चारित्र तप वीरज, ए पांचे आचार,
एह तणा इहभव परभवना, आलोइए अतिचार रे ।
**प्राणी ज्ञान भणो गुणखाणी**, वीर वदे एम वाणीरे .प्राणी...।।1।।

गुरु ओळवीए नहीं गुरु विनये, काळे धरी बहुमान,
सूत्र अर्थ तदुभय करी सुधां, भणीए वही उपधान रे .प्रा .ज्ञा..।।2।।

ज्ञानोपगरण पाटीपोथी, ठवणी नोकारवाली,
तेहतणी कीधी आशातना, ज्ञानभक्ति न संभाळी रे .प्रा .ज्ञा..।।3।।

इत्यादिक विपरीतपणाथी, ज्ञान विराध्युं जेह,
आ भव परभव वळी रे भवोभव, मिच्छामि दुक्कडम् तेह रे,
**प्राणी समकित ल्यो शुद्ध जाणी**, वीर वदे एम वाणी रे .प्रा .सम..।।4।।

जिन वचने शंका नवि कीजे, नवि परमत अभिलाष,
साधु तणी निंदा परिहरजो, फळ संदेह म राख रे . प्रा .सम .।।5।।

मूढपणुं छंडो परशंसा, गुणवंतनी आदरीये,
साहम्मीने धर्मे करी थीरता, भक्तिप्रभावना करीए .प्रा .सम...।।6।।

संघ चैत्य प्रासाद तणो जे, अवर्णवाद मन लेख्यो,
द्रव्य देवको जे विणसाड्यो, विणसंता उवेख्योरे . प्रा .सम..।।7।।

इत्यादिक विपरीतपणाथी, समकित खंड्युं जेह,
आ भव परभव वळी रे भवोभव, मिच्छामि दुक्कडम् तेह रे,
**प्राणी चारित्र त्यो चित्त आणी**, वीर वदे एम वाणीरे. प्रा.चा..।।8।।

पाँच समिति त्रण गुप्ति विराधी, आठे प्रवचन माय,
साधु तणे धर्मे प्रमादे, अशुद्ध वचन मन काय रे, प्रा.चा...।।9।।

श्रावकने धर्मे सामायिक, पोसहमां मन वाळी,
जे जयणापूर्वक ए आठे, प्रवचन माय न पालीरे.प्रा.चा...।।10।।

इत्यादिक विपरीतपणाथी, चारित्र डहोळ्युं जेह,
आभव परभव वळीरे भवोभव, मिच्छामिं दुक्कडमतेहरे. प्रा.ची.।।11।।

बार भेदे तप नवि कीधो, छते योगे निज शक्ते,
धर्मे मन वच काया वीरज, नहि फोरवीयुं भगते रे.प्रा.चा...।।12।।

तप वीरज आचार एणी परे, विविध विराध्यां जेह,
आभव परभव वळीरे भवोभव मिच्छामिदुक्कडम् तेहरे.प्रा.चा.।।13।।

वळी य विशेषे चारित्र केरा, अतिचार आलोइए,
वीरजिणेसर वयण सुणीने, पापमल सवि धोइए रे. प्रा.चा.।।14।।

## ढाळ-2

**(रागः संभव जिनवर)**

पृथ्वी पाणी तेउ, वाउ वनस्पति, ए पाँचे थावर कह्या ए,
करी कर्षण आरंभ, खेत्र जे खेडीयां,
कुवा तळाव खणावीया ए0।।1।।

घर आरंभ अनेका, टांकाभोंयरा, मेडी चणावीआ ए,
लींपण गुपण काज, एणी परे परे,
पृथ्वीकाय विराधीया ए0 ।।2।।

धोयण नाहण पाणी, झीलण अप्काय, छोति धोति करी दुहव्याए,
भाठीगर कुंभार, लोह सोवनगरा,
भडभुंजा लीहालागरा ए0 ।।3।।

तापण शेकण काज, वस्त्र निखारण, रंगण रांधण रसवतीए,
एणीपरे कर्मादान, परे परे केलवी,
तेउ वाउ विराधीया ए0 ।।4।।

वाडी वन आराम, वावी वनस्पति, पान फळ फुल चुंटीयाए,
पोंकपापडी शाक, शेक्या सुकव्यां,
छेद्यां छुद्यां आथीयां ए0 ।।5।।

अळशीने एरंड, घाणी घालीने, घणा तिलादिक पीलीयाए,
घाली कोलु मांहे, पीली सेलडी,
कंद मूळ फळ वेचीयां ए0 ।।6।।

एम एकेन्द्रिय जीव, हण्या हणावीया, हणतां जे अनुमोदियाए,
आभव परभव जेह, वलीरे भवोभव,
ते मुज मिच्छामि दुक्कडम् ए0।।7।।

कृमि करमीया कीडा, गाडर गंडोला, इयल पोरा अलशीयांए,
वाळो जळो चुडेल, विचलित रस तणा,
वळी अथाणां प्रमुखंनां ए0।।8।।

एम बेइन्द्रिय जीव, जे मे दुहव्या, ते मुज मिच्छामि दुक्कडम् ए,
उधेही जुं लीख मांकड मंकोडा,
चांचड कीडी कुंथुआ ए0 ।।9।।

गद्धेहिआं घीमेल, कानखजुरा गींगोडा धनेरियो ए,
एम तेइन्द्रिय जीव, जे मे दुहव्या,
ते मुज मिच्छामि दुक्कडम् ए0।।10।।

माखी मच्छर डांस, पतंगियां, कंसारी कोलियावडा ए,
विंछु तीड, भमरा भमरीओ,
कुंतां बग खड मांकडी ए0।।11।।

एम चौरिन्द्रिय जीव, जे में दुहव्या, ते मुज मिच्छामि दुक्कडम् ए,
जळमां नाखी जाळ जळचर दुहव्या,
वनमां मृग संतापीया ए0 ।।12।।

पीड्या पंखी जीव, पाडी पासमां पोपट घाल्या पांजरे ए,
एम पंचेन्द्रिय जीव, जे मे दुहव्या,
ते मुज मिच्छामि दुक्कडम् ए0।।13।।

## ढाळ-3

**(रागः सुमतिनाथ गुणशुं मिलीजी)**

क्रोध लोभ भय हास्यथीजी, बोल्यां वचन असत्य,
कूड करी धन पारकांजी, लीधां जेह अदत्त रे,
**जिनजी मिच्छामि दुक्कडम्** आज, तुम साखे महाराज रे,
जिनजी दईसारु काजरे, **जिनजी मिच्छामि दुक्कडम् आज** ।।1।।

देव मनुष्य तिर्यंचनांजी, मैथुन सेव्यां जेह,
विषयारस लंपटपणेजी, घणुं विडंब्यो देह रे जिनजी ।।2।।

परिग्रहनी ममता करीजी, भव भव मेली आथ,
जे जिहांनी ते तिहां रहीजी, कोई न आवे साथ रे, जिनजी ।।3।।

रयणी भोजन जे कर्याजी, कीधां भक्ष अभक्ष,
रसना रसनी लालचेजी, पाप कर्यां प्रत्यक्ष रे, जिनजी ।।4।।

व्रत लेई विसारीयांजी, वळी भांग्या पच्चक्खाण,
कपट हेतु किरिया करीजी, कीधां आप वखाण रे, जिनजी ।।5।।

त्रण ढाले आठे दुहेजी, आलोया अतिचार,
शिवगति आराधन तणोजी, ए पहेलो अधिकार रे, जिनजी ।।6।।

## ढाळ-4

## (2) व्रत उच्चारण

पंच महाव्रत आदरो, साहेलडी रे अथवा त्यो व्रत बार तो,
यथाशक्ति व्रत आदरी, साहेलडी रे, पाळो निरतिचार तो ।।1।।

व्रत लीधां संभारीए, साहेलडी रे, हैडे धरीए विचार तो,
शिवगति आराधन तणो साहेलडी रे, ए बीजो अधिकार तो ।।2।।

## (3) क्षमापना

जीव सर्वे खमावीए साहेलडी रे, योनि चोराशी लाख तो,
मन शुद्धे करी खामणां साहेलडी रे, कोई शुं रोष न राख तो ।।3।।

सर्व मित्र करी चिंतवो साहेलडी रे, कोई न जाणो शत्रुं तो,
राग द्वेष एम परिहरो साहेलडी रे, कीजे जन्म पवित्र तो ।।4।।
साहमी संघ खमावीए साहेलडी रे, जे उपनी अप्रीत तो,
सज्जन कुटुम्ब करी खामणां साहेलडी रे,
ए जिनशासननी रीत तो ।।5।।
खमीए ने खमावीए साहेलडी रे, एह ज धर्मनो सार तो,
शिवगति आराधनतणो साहेलडी रे, ए त्रीजो अधिकार तो ।।6।।

## (4) पाप स्थानक वोसिराना

मृषावाद हिंसा चोरी साहेलडी रे, धन मूर्च्छा मैथुन तो,
क्रोध मान माया तृष्णा साहेलडी रे, प्रेम द्वेष पैशुन्य तो ।।7।।
निंदा कलह न कीजीए साहेलडी रे, कुडां न दीजे आळ तो,
रति अरति मिथ्या तजो साहेलडी रे, माया मोह जंजाळ तो ।।8।।
त्रिविध त्रिविध वोसिरावीए साहेलडी रे, पापस्थानक अढार तो,
शिवगति आराधन तणो साहेलडी रे, ए चोथो अधिकार तो ।।9।।

## ढाळ-5

## (5) चार शरण

**(रागः शासन नायक वीरजी)**

जन्म जरा मरणे करीए, आ संसार असार तो,
कर्यां कर्म सहु अनुभवे ए, कोई न राखणहार तो ।।1।।

शरण एक अरिहंतनुं ए, शरण सिद्ध भगवंत तो,
शरण धर्म श्री जिननो ए, साधु शरण गुणवंत तो ।।2।।

अवर मोह सवि परिहरीए, चार शरण चित्त धार तो,
शिवगति आराधन तणोए, ए पांचमो अधिकार तो ।।3।।

## (6) दुष्कृत गर्हा

आ भव परभव जे कर्या ए, पापकर्म केई लाख तो,
आतम साखे ते निंदीए ए, पडिक्कमीए गुरु साख तो।।4।।

मिथ्यामत वर्तावीया ए, जे भाख्यां उत्सूत्र तो,
कुमति कदाग्रहने वशे ए, जे उथाप्यां सूत्र तो ।।5।।

घड्यां घडाव्यां जे घणाए, घरंटी हळ हथीयार तो,
भव भव मेली मूकियां ए, करतां जीव संहार तो ।।6।।

पाप करीने पोषीया ए, जनम जनम परिवार तो,
जनमांतर पहोत्या पछीए, कोईए न कीधी सार तो ।।7।।

आ भव परभवे जे कर्याए एम अधिकरण अनेक तो,
त्रिविधे त्रिविधे वोसरावीए, ए आणी हृदयविवेक तो ।।8।।

दुष्कृत निंदा अेम करीए, पाप करो परिहार तो,
शिवगति आराधन तणो ए, ए छट्ठो अधिकार तो ।।9।।

## ढाळ (6)

## (7) सुकृत अनुमोदना

**(रागः नाम इलापुत्र जाणीए)**

धन धन ते दिन माहरो, जीहां कीधो धर्म,
दान शीयळ तप भावना, टाळ्यां दुष्कृत कर्म ।धन...।।1।।

शेत्रुंजादिक तीर्थनी, जे कीधी जात्र,
जुगते जिनवर पूजीया, वळी पोष्यां पात्र । धन...।।2।।

पुस्तक ज्ञान लखावीयां, जिनवर जिन चैत्य,
संघ चतुर्विध साचव्या, अे साते खेत्र । धन...।।3।।

पडिकमणां सुपरे कर्यां, दीधां अनुकंपादान,
साधु सूरि उवज्झायने, दीधां बहुमान । धन...।।4।।

धर्म काज अनुमोदीए, अेम वारोवार,
शिवगति आराधन तणो, अे सातमो अधिकार ।धन...।।5।।

## (8) शुभ भावना

भाव भलो मन आणीए, चित्त आणी ठाम,
समता भावे भाविए, अे आतमराम । धन...।।6।।

सुख दुःख कारण जीवने, कोई अवर न होय,
कर्म आप जे आचर्यां, भोगवीए सोय । धन...।।7।।

समता विण जे अनुसरे, प्राणी पुन्यनुं काम,
छार उपर तो लींपणुं झांखर चित्राम । धन...।।8।।

भाव भली परे भावीए, ए धर्मनो सार,
शिवगति आराधन तणो, अे आठमो अधिकार । धन...।।9।।

## ढाळ (7)

## (9) अनशन

**(रागः जय जय भवि हितकर)**

हवे अवसर जाणी, करी संलेखन सार,
अणसण आदरीए, पच्चक्खी चारे आहार,
लोलुपता सवि मूकी, छांडी ममता अंग,
अे आतम खेले, समता ज्ञान तरंग ।।1।।

गति चारे कीधां, आहार अनंत निःशंक,
पण तृप्ति न पाम्यो, जीव लालचीयो रंक,
दुलहो अे वळी वळी, अणसणनो परिणाम,
एहथी पामीजे, शिवपद सुरपद ठाम ।।2।।

धन धन्ना शालिभद्र, खंधो मेघाकुमार,
अणसण आराधी, पाम्या भवनो पार,
शिवमंदिर जाशे, करी अेक अवतार,
आराधन केरो, अे नवमो अधिकार ।।3।।

## (10) नवकार मंत्र रटण

दशमे अधिकारे महामंत्र नवकार,
मनथी नवि मुको, शिवसुख फल सहकार,
अे जपतां जाये, दुर्गति दोष विकार,
सुपरे अे समरो, चौद पूरवनो सार ।।4।।

जनमांतर जातां, जो पामे नवकार,
तो पातिक गाळी , पामे सुर अवतार,
अे नवपद सरीखो, मंत्र न कोई सार,
आ भव ने परभवे, सुख संपत्ति दातार ।।5।।

जुओ भील भीलडी, राजा राणी थाय,
नवपद महिमाथी राजसिंह महाराय,
राणी रत्नवती बेहु पाम्यां छे सुरभोग,
एक भव पछी लेशे, शिववधू संजोग ।।6।।

श्रीमतीने ए वळी, मंत्र फळ्यो तत्काल,
फणीधर फीटीने, प्रगट थई फुलमाळ,
शिवकुमरे जोगी, सोवन पुरिसो कीध,
अेम एणे मंत्रे काज घणाना सिद्ध ।।7।।

ए दश अधिकारे, वीर जिणेसर भाख्यो,
आराधन केरो विधि, जेणे चित्तमां राख्यो,
तेणे पाप पखाळी, भव भय दूरे नाख्यो,
जिन विनय करंता सुमाति अमृतरस चाख्यो ।।8।।

## ढाळ-8

**(रागः मनना मनोरथ सवि)**

सिद्धारथ रायकुळ तिलोए, त्रिशला मात मल्हार तो,
अवनी तळे तमे अवतर्या ए, करवा अम उपकार,
जयो जिन वीरजीए ।।1।।

में अपराध कर्या घणा ए, कहेता न लहुं पार तो,
तुम चरणे आव्या भणीए, जो तारे तो तार । जयो...।।2।।

आश करीने आव्यो ए, तुम चरणे महाराज तो
आव्या ने उवेखशो ए, तो केम रहेशे लाज । जयो...।।3।।

करम अलुजण आकरांए, जन्म मरण जंजाळ तो,
हुं छुं एहथी उभग्यो ए, छोडावो देव दयाल ।जयो...।।4।।

आज मनोरथ मुज फल्याए, नाठां दुःख दंदोल तो,
तुठ्यो जिन चोवीशमो ए, प्रकट्यां पुण्य कल्लोल । जयो.।।5।।

भवे भवे विनय तुमारडो ए, भाव भक्ति तुम पायतो,
देव दया करी दीजिए ए, बोधि बीज सुपसाय । जयो..।।6।।

## कळश

इम तरण सुगति कारण, दु:ख निवारण जग जयो,
श्री वीर जिनवर चरण थुणतां, अधिक मन उलट थयो ।।7।।

श्री विजय देवसूरींद पट्टधर, तीरथ जंगम एणी जगे,
तपगच्छपति श्री विजयप्रभसूरि, सूरि तेजे झगमगे ।।8।।

श्री हीरविजयसूरि शिष्य वाचक, कीर्तिविजय सुरगुरु समा,
तस शिष्य वाचक विनय विजये थुण्यो जिन चोवीसमो ।।9।।

सयसत्तर संवत ओगणत्रीशे, रही रांदेर चोमासए,
विजय दशमी विजय कारण, कीओ गुण अभ्यास ए।।10।।

नरभव आराधन सिद्धि साधन, सुकृत लील विलास ए,
निर्जरा हेते स्तवन रचीयुं, नामे पुण्य प्रकाश ए. ।।11।।

22

# पुण्य प्रकाश का स्तवन

## (हिन्दी-भावानुवाद)

## दोहा

समस्त सिद्धि को देने वाले चौबीस जिनेश्वर परमात्मा,
सद्गुरु एवं श्री सरस्वती देवी के चरणों मे प्रेम पूर्वक
प्रणाम करता हूँ... ।।1।।

ऊर्ध्वलोक, तिर्च्छालोक एवं अधोलोक रुप तीन भुवन के स्वामी,
माता त्रिशला के नन्दन, गंभीरता गुण से सुशोभित,
शासन के नायक, कर्मो से युद्ध करने वीरता बतलाने में
सबसे आगे ऐसे श्री वर्धमान महावीर स्वामी की जय हो...।।2।।

भव्य जीवों के आत्महित के लिए एक दिन श्री महावीर स्वामी के
चरणों में प्रणाम करके श्री गौतम स्वामी ने पूछा... ।।3।।

हे प्रभु ! आप बताइये, हम किस प्रकार मोक्ष मार्ग की आराधना करे ?
तब अमृत के समान सुन्दर वचनों से तीर्थंकर की
लक्ष्मी से युक्त भगवान ने कहा... ।।4।।

शुभ गति की आराधना के लिए इन दस अधिकारों की आराधना है, (1) अतिचारो की आलोचना । (2) सद्गुरु के समक्ष व्रतों का स्वीकार । (3) चौरासी लाख जीव योनि मे रहे समस्त जीवों से क्षमापना । (4) विधिपूर्वक अठारह पापस्थानकों का विसर्जन । (5) अरिहन्त, सिद्ध, साधु और केवली प्ररुपित धर्म की शरण का स्वीकार । (6) अपने पापों की निन्दा । (7) अपने एवं अन्य के सुकृतों की हृदय से अनुमोदना । (8) मन को शुभ भावना से

भावित करना । (9) मरण समय चारों आहार के त्याग पूर्वक अनशन का स्वीकार । एवं (10) एकाग्रता से नवपद का जाप । मन में हर्ष एवं आदर लाकर इन दस विषयों की आराधना करो जिससे भव सागर को पार कर सकोगे । ।।5।। से ।।8।।

## ढाल-पहली

ज्ञान गुण की खान के समान श्री वीर प्रभु कहते है, `हे धर्मार्थी प्राणी ! समकित को शुद्ध जानकर स्वीकार करो, तथा इस जन्म और पूर्वजन्म में ज्ञानाचार, दर्शनाचार, चारित्राचार, तपाचार एवं वीर्याचार स्वरुप पाँच आचारों के विषय में अतिचारों का सेवन किया हो, उसकी आलोचना करो ।।1।।

ज्ञानाचार के आठ आचार-काल समय पढ़ना, गुरु के प्रति विनय और बहुमान रखना, उपधान करना, जिनके पास ज्ञान प्राप्त किया हो उसका नाम नहीं छिपाना, सूत्र, अर्थ एवं सूत्रार्थ को पढ़ना । इन आठ आचारों में तथा ज्ञान के उपकरण पाटी-पोथी, ठवणी (पुस्तक रखने के लिए लकडे का साधन) नवकारवाली-माला आदि की आशातना की हो । ज्ञान की भक्ति नहीं की हो तथा और भी विपरीत रुप से ज्ञान की इस जन्म में अथवा पूर्व के जन्मों में विराधना की हो तो वह मेरा दुष्कृत मिथ्या हो । (2 से 4)

दर्शनाचार के आठ आचार-जिनेश्वर परमात्मा के वचनों पर शंका नहीं करना । अन्य धर्म की अभिलाषा नहीं करना । साधु भगवंतों की निन्दा नहीं करना । परमात्मा के धर्म की आराधना के फल की प्राप्ति में संदेह नहीं करना । मिथ्यात्वी की पूजा प्रभावना देखकर आकर्षित नहीं होना । गुणी-जनों की प्रशंसा

करना । साधर्मिक को धर्म मार्ग मे स्थिर करना । जैन शासन की भक्ति-प्रभावना करना । इन आठ आचारों में तथा श्री संघ, जिनालय, प्रतिमा के विषय में अवर्णवाद-निन्दा की हो, देवद्रव्य आदि का दुरुपयोग किया हो अथवा दुरुपयोग देखकर उसकी उपेक्षा की हो तथा और भी किसी विपरीत आचरण से समकित का खंडन, इस जन्म में अथवा पूर्व के जन्मों में किया हो तो वह मेरा दुष्कृत मिथ्या हो । (5 से 8)

हे धर्मार्थी प्राणी ! परमात्मा महावीर स्वामी कहते है- हृदय से चारित्र का स्वीकार करो । चारित्राचार के आठ आचार- पाँच समिति 1) **ईर्या समिति**=देखकर चलना । 2) **भाषा समिति**= सावद्य भाषा का त्याग करना । 3) **ऐषणा समिति**=42 दोष से रहित शुद्ध आहार-पानी ग्रहण करना । 4) **आदान भण्ड-मत्त निक्षेपना समिति**=किसी भी वस्तु को लेते समय दृष्टि से तथा रजोहरण से प्रमार्जन करना । 5) **पारिष्ठापनिका समिति**=अनुपयोगी वस्तु को निर्जीव भुमि पर यतना पूर्वक त्याग करना । तथा तीन गुप्ति 1) **मन-गुप्ति-मन** में आर्त-रौद्रध्यान नहीं करना, धर्म-शुक्ल ध्यान करना । 2) **वचन गुप्ति**=पापकारी वचनों का त्याग कर धर्म संबंधी वचनों का उच्चारण करना । 3) **काय-गुप्ति**=पापकारी प्रवृत्ति का त्याग कर, काया को कायोत्सर्ग आदि शुभ प्रवृत्ति में जोड़ना । इन अष्ट प्रवचनमाता के पालन में विराधना की हो । इन चारित्र के आचारों में साधु जीवन में प्रमाद के कारण मन-वचन-काया से अशुद्ध व्यवहार किया हो । श्रावक जीवन में सामायिक पौषध करते समय यतना पूर्वक अष्ट प्रवचन माता का पालन नहीं किया हो तथा अन्य किसी विपरीत आचरण से इस

जन्म में अथवा पूर्व के जन्मो में चारित्र की विराधना की हो तो वह मेरा दुष्कृत मिथ्या हो । (9 से 11) ।

बारह प्रकार के तप-**छह बाह्य तप**-अनशन, ऊनोदरी, वृत्ति संक्षेप, रस त्याग, कायों क्लेश, संलीनता । तथा **छह अभ्यंतर तप**-प्रायश्चित, विनय, वैयावृत्य, स्वाध्याय, ध्यान और कायोत्सर्ग । इन बारह प्रकार के तपों का यथाशक्ति आचरण नहीं किया हो । तथा धर्म कार्यों में मन-वचन-काया की शक्ति का सदुपयोग नहीं किया हो । इस प्रकार तपाचार एवं वीर्याचार के आचारों में इस जन्म में अथवा पूर्व के जन्मों में जो विराधना की हो वह मेरा दुष्कृत मिथ्या हो । (12-13)

और भी चारित्राचार के विषय में अतिचार का सेवन किया हो तो वीर जिनेश्वर परमात्मा के वचनों को सुनकर पाप का सारा मैल धोकर आत्मा को पवित्र करो (14)

## दूसरी ढाल

पृथ्वीकाय, अप्काय, तेउकाय, वायुकाय, वनस्पतिकाय ये पाँच स्थावर है । (1)

खेती आदि में आरंभ किये हो, खेत मे हल चलाए, कुएं और तालाब खुदाये हो ।

घर आदि का निर्माण करते समय पानी की टंकी बनवायी, भू-गर्भ खुदाया, घर उँचा करके माले बनवाये हो, दिवारे एवं फर्श का रंग-रोगान आदि विविध प्रकारों से पृथ्वीकाय जीवों की विराधना की हो । (2 से 4)

कपडे बर्तन आदि की सफाई करते समय स्नान करते समय धोती आदि करते अप्काय के जीवों की विराधना की हो (5)

कुम्हार, लुहार, सोनी के जन्मो में भट्ठी सुलगाई, भड-भुंजा, ठण्डी में ताप करना, धान्य-भोजन आदि को पकाना, रसोई बनाना, कपडों को रंगाना, आदि अनेक प्रकार से 15 कर्मादानों का सेवन करते समय तेउकाय और वायुकाय की विराधना की हो (6-8)

वन, बगीचें, वाडी आदि में वनस्पति का वपन किया हो, उनमें से पत्ते, फुल, फल आदि तोडे हो, पोंक-पापडी-सब्जी आदि सेके हो-सुकाए हो । उन्हें छेद किया, छीला, आचार बनाया । अलसी-एरंड के पौधे में पानी डाला, तिल आदि पिलाया हो । गन्ने को पीला हो, कंदमूल एवं फल सब्जी आदि बेंचे हो । (9-12)

इस प्रकार इस जन्म में अथवा पूर्व के जन्मो में एकेन्द्रिय जीवों का हनन किया, हनन करवाया एवं हनन करते व्यक्ति की अनुमोदना की हो तो वह मेरा दुष्कृत मिथ्या हो । (13-14)

कृमि-पेट के कीडे, कृमि, गाडर, गंडोला, इल्ली, पानी के कीडें, अलसीये, वाला, जलो, चुडेल, चलित-रस, बासी भोजन, आचार आदि में पैदा होनेवाले दो इन्द्रिय वाले जीवों की हिंसा-विराधना की हो तो वह मेरा दुष्कृत मिथ्या हो । (15 से 17)

दीमक, जू, लीख, खटमल, मकोडे, चींटी, कुंथु, घीमेल, कानखजुरे, गींगोडा, धान्य में पैदा होने वाले कीडे आदि तीन इन्द्रिय वाले जो जीवो की हिंसा की हो तो वह मेरा दुष्कृत मिथ्या हो । (18 से 20)

मक्खी, मच्छर, डांस, पतंगा, कंसारी, बिच्छु, तीड, भौंरा, मधुमक्खी, बग, मकडी आदि चार इन्द्रिय वाले जीवों की हिंसा-विराधना की हो, तो वह मेरा दुष्कृत मिथ्या हो (21 से 23)

कुएं, तालाब, समुद्र आदि पानी में जाल डालकर जलचर जीवों को दुःख दिया हो-उन्हें मारा हो, तथा जंगल में हिरण आदि जंगली जानवरों को सताया हो, पक्षिओं को जाल में फँसा कर उन्हें पीड़ा की हो, पोपट आदि पक्षिओं को पींजरे में डाला हो, आदि पाँच इन्द्रिय वाले जीव की हिंसा विराधना की हो तो वह मेरा दुष्कृत मिथ्या हो । (24 से 26)

## तीसरी ढाल

क्रोध, लोभ, भय अथवा हास्य से जो कुछ भी असत्य वचन बोला हो तथा अनीति करके पराये धन को ग्रहण करने स्वरुप चोरी की हो तो इन विषयों में, हे जिनेश्वर परमात्मा ! आज आपकी साक्षी में मिच्छा-मि-दुक्कडम् देकर उस पापकारी प्रवृत्ति की माफी मांगते हुए अपनी आत्मा को शुद्ध करने का कार्य करता हूँ । (1)

देवता के विषय में, मनुष्य के विषय में तथा पशुओं के विषय में जो भी पाँच इन्द्रियों के विषयों में लीन होकर मैथुन का सेवन करते हुए शरीर की विडंबना की हो तो इस पापकारी प्रवृत्ति की माफी मांगते हुए अपनी आत्मशुद्धि के कार्य को सफल करता हूँ । (2)

धन-धान्य आदि नौ प्रकार के परिग्रह में ममत्व करके उसका संग्रह किया । परंतु जो जहां था, वो वहीं रह गया, परलोक मे जाते हुए कुछ भी साथ नहीं आया । अतः परिग्रह के पाप की माफी मांगते हुए अपनी आत्म शुद्धि के कार्य को सफल करता हूँ । (3)

रात्रि भोजन किया हो स्वादिष्ट रस की लालच में अभक्ष्य का भक्षण किया हो तथा और भी जानबुझकर पापाचरण किया हो तो इन पापकारी प्रवृत्ति की माफी मांगते हुए अपनी आत्म शुद्धि के कार्य को सफल करता हूँ । (4)

व्रत-नियमों का स्वीकार करके भूला दिया हो तथा प्रत्याख्यान स्वीकार करके तोड़ा हो , मन में कपट कर धर्म क्रिया की हो तथा अपने मुंह से अपनी प्रशंसा की हो तो इन पापकारी प्रवृत्ति की माफी मांगते हुए अपनी आत्मशुद्धि के कार्य को सफल करता हूँ । (5)

इस प्रकार तीन ढाल एवं आठ दोहे के द्वारा मोक्ष प्राप्ति की आराधना के प्रथम अधिकार में अतिचारों की आलोचना बताई गई ! (6)

## चौथी ढाल

हे सखी ! अपनी शक्ति के अनुसार, साधु जीवन के योग्य पंच महाव्रत अथवा श्रावक जीवन के योग्य बारह व्रतों का स्वीकार करके उन्हें निरतिचार रुप से पालन करों । (1)

हृदय में व्रतों का विचार करते हुए हमेशा स्वीकार किये व्रतों का स्मरण करते रहना, यह मोक्ष प्राप्ति की आराधना में दूसरा अधिकार-सद्गुरु के समक्ष व्रतों का स्वीकार बताया गया । (2)

मन की शुद्धि करके चौराशी लाख योनी के सभी जीवों से क्षमा मांगो । किसी भी जीव के प्रति रोष मत रखों । (3)

'सभी जीव को मित्र समझकर किसी को भी शत्रु मत मानो' । इस तरह राग-द्वेष का त्याग करके, अपने जन्म को पवित्र करो । (4)

जिनेश्वर परमात्मा अथवा चतुर्विध श्रीसंघ के प्रति किसी प्रसंग पर मन में अप्रीति हुई हो तो उसकी क्षमा मांगो । तथा सज्जन अथवा कुटुंबीजनों के प्रति भी अप्रीति होने पर क्षमा मांगो-यह जैन शासन की रीति है । (5)

क्षमा मांगना और क्षमा देना, यह जैन धर्म का सार है । इस प्रकार मोक्ष प्राप्ति की आराधना में चौराशी लाख जीव योनियों में रहे समस्त जीवों से क्षमापना नाम का तीसरा अधिकार कहा । (6)

झूठ बोला, हिंसा की, चोरी की, धन पर मुर्च्छा रखी, मैथून सेवन किया, क्रोध किया, मान किया, माया की, तृष्णा वश लोभ किया, राग स्वरुप प्रेम किया, द्वेष किया, चुगली की, दूसरों की निंदा की हो, झगड़ा किया हो, किसी पर झूठा आरोप दिया हो, रति, अरति, माया मृषावाद और मिथ्यात्व के जंजाल का सेवन किया हो तो मन-वचन-काया से तथा करण-करावण और अनुमोदन से इन अठारह पापस्थानकों का मैं त्याग करता हूँ । इस प्रकार मोक्ष प्राप्ति की आराधना में विधिपूर्वक अठारह पापस्थानकों के विसर्जन नाम का चौथा अधिकार कहा । (7 से 9)

## पांचवी ढाल

यह संसार-जन्म, वृद्धावस्था एवं मरण का ही कारण होने से असार है । यहां सारभूत कुछ भी नहीं है । अपने किये हुए कर्मों को जीवात्मा स्वयं ही अनुभव करती है अतः इस संसार में जीवात्मा का रक्षण करने वाला कोई नहीं है । (1)

अशरण ऐसे इस संसार में जीवात्मा के लिए एक मात्र अरिहंतों का, सिद्ध भगवंतों का, जिनेश्वर परमात्मा के धर्म का

एवं साधु भगवंतों का ही शरण है । (2)

इसलिए अन्य सभी प्रकार के मोह का त्याग कर इन चार शरण को हृदय में धारण करो । मोक्ष प्राप्ति की आराधना में चार की शरण स्वीकार नाम का यह पाँचवा अधिकार कहा । (3)

इस जन्म में अथवा अन्य जन्मों में जो कोई भी पापाचरण किया हो तो आत्म-साक्षी से निंदा करो एवं गुरु की साक्षी से उनका प्रतिक्रमण करो । (4)

मिथ्या धर्म का प्रवर्तन किया हो, उनका प्रचार किया हो, परमात्मा के वचनों से विरुद्ध उत्सूत्र बोला हो, कुमति और कदाग्रह के वश होकर परमात्मा के वचनों का खंडन किया हो, अथवा घंटी-चक्की, हल, हथियार-शस्त्र आदि बनाए हो या बनवाए हो, जिनसे आज भी जीवों का संहार होता हो ऐसे शस्त्र आदि को पूर्व-जन्मों में कहीं रखकर आये हो, तथा हर जन्मों में पाप करके परिवार का पोषण किया परंतु अन्य जन्म में जाने के बाद किसी ने भी हमे संभाला नहीं । इस प्रकार इस जन्म में अथवा अन्य जन्म में अनेक अधिकरण किये हो तो हृदय में विवेक धारण करके उन्हें मन-वचन-काया तथा करण-करावण एवं अनुमोदन रुप त्रिविध-त्रिविध से विसर्जन करो । (5 से 8)

इस प्रकार मोक्ष प्राप्ति की आराधना में दुष्कृतों की निंदा करते हुए पापों के त्याग स्वरुप यह छठा अधिकार कहा । (9)

## छठी ढाल

धन्य है मेरा वह दिन, जिस दिन दुष्कृत कर्म का त्याग करते हुए मैंने दान-शील-तप और भावना स्वरुप धर्म की आराधना की ।(1)

धन्य है मेरा वह दिन, जिस दिन मैंने शत्रुंजय आदि तीर्थ की यात्रा की, साथ ही जिनेश्वर परमात्मा की पूजा की तथा सुपात्र में दान दिया । (2)

धन्य है मेरा वह दिन, जिस दिन मैंने पुस्तकों का आलेखन कराया हो, जिनेश्वर परमात्मा, जिनेश्वर प्रतिमा जिनमंदिर एवं चतुर्विध श्री संघ के स्वरुप सात क्षेत्र की रक्षा की । (3)

धन्य है मेरा वह दिन, जिस दिने मैंने, शुभ भाव से प्रतिक्रमण किया, अनुकंपा दान दिया, साधु, आचार्य और उपाध्याय का बहुमान किया । (4)

इस प्रकार बार बार धर्म कार्य की अनुमोदना स्वरुप मोक्ष प्राप्ति की आराधना का यह साँतवा अधिकार कहा । (5)

हे आत्मन् ! शुभ भावना से मन को स्थिर कर समता भाव से मन को भावित करो । (6)

इस संसार में जीव ने जो कर्म किये है, उसी के कारण सुख दुःख का अनुभव होता है अन्य कोई कारण नहीं है । (7)

जो प्राणी समता के बिना पुण्य का कार्य करते है, उनका वह कार्य लींपन किये हुए चित्त पर पुनः लींपन करने के समान निरर्थक है । (8)

मोक्ष प्राप्ति के लिए धर्म के सार स्वरुप मन को शुभ भावों से भावित करे यह आठवां अधिकार कहा । (9)

## साँतवीं ढाल

अब मृत्यु का अवसर जानकर, सारभूत संलेखना कर शरीर की ममता और सभी पदार्थों की लोलुपता को छोडकर, समता और ज्ञान तरंग में आत्मरमणता से चारों आहार का प्रत्याख्यान करके अनशन का स्वीकार करो । (1)

चार गतियों में भ्रमण कर जीव ने अनंत प्रकार के आहार को ग्रहण किया है, फिर भी भी जीव कहीं भी तृप्त नहीं हुआ है। इसलिए अनशन का परिणाम खूब दुर्लभ है। इससे मोक्ष पद और देवलोक में इन्द्र आदि पदवी होती है। (2)

धन्य है धन्नाजी-शालिभद्रजी, खंधक मुनि, मेघकुमार आदि महामुनि जिन्होंने अनशन की आराधना कर भव सागर पार किया, तथा एक बार मनुष्य जन्म लेकर मोक्ष मे जाएंगे। इस प्रकार मोक्ष प्राप्ति का नौवां अधिकार कहा। (3)

दसवें अधिकार में महामंत्र नवकार को मन से कभी अलग न करो। अर्थात् मन में हमेशा नवकार महामंत्र का जाप करो ! यह नवकार महामंत्र मोक्ष सुख को प्रदान करने वाला आम्र फल जैसा है। चौदह पूर्व के सार ऐसे इस नवकार महामंत्र का हमेशा स्मरण करो। इसको जाप करने से दुर्गति, दोष एवं आत्मिक विकारों का नाश होता है। (4)

जीवन के अंत समय जिसे नवकार महामंत्र का स्मरण होता है, उसे पापों का नाश होने से देवलोक में जन्म प्राप्त होता है। इन नौ पदों के समान अन्य कोई श्रेष्ठ मंत्र नहीं है जो इस जन्म में और अगले जन्म में सुख-संपत्ति देने में समर्थ है। (5)

नवकार महामंत्र का प्रभाव देखो ! भील और उसकी पत्नी राजा-रानी बने। वह भील-राजसिंह महाराजा बना और उसकी पत्नी रत्नवती रानी बनी। वहाँ से देवलोक के दिव्य सुखों को पाकर एक भव के बाद मोक्ष प्राप्त करेंगे। (6)

श्रीमती को महामंत्र का जाप तुरंत ही फलदायी हुआ।

उसे मारने के लिए घडे में रखा सांप भी फूलमाला बन गई । शिवकुमार को महामंत्र के जाप से योगी पुरुष भी सुवर्ण पुरुष बन गया । इस मंत्र के प्रभाव से अनेकों के कार्य सिद्ध हुए है । (7)

इस प्रकार श्री महावीर स्वामी ने आराधना करने योग्य दस अधिकार कहे है । जिसने इन अधिकारों को हृदय में रखा है, उसने जन्म जन्मों के पापों का अंत कर दिया है एवं जिनेश्वर परमात्मा के प्रति विनय करते हुए सुमति रुपी अमृत के रस का आस्वाद लिया है । (8) (यहाँ रचनाकार का नाम पू. उपाध्याय श्री विनयविजयजी का नाम निर्देश किया गया है ।)

## आठवीं ढाल

हे महावीर स्वामी ! आप सिद्धार्थ राजा के कुल में तिलक समान हो । आप माता त्रिशला के मन को आनंद देने वाले हो । आपने हम पर उपकार करने के लिए पृथ्वीतल पर अवतरण लिया है । हे प्रभुजी ! आप जरा मेरी ओर नजर करें । (1)

मैने खूब अपराध किये है । कहता रहूं तो भी मेरे अपराधों का अंत आए, ऐसा नहीं है । अब मैं आपकी शरण में आया हूँ, अतः आप मेरा उद्धार करो । (2)

हे महाराजा ! मैं बड़ी आशा रखकर आपके चरणों में आया हूँ । यदि आप मेरी उपेक्षा करोंगे तो मै किसके पास जाऊंगा । अतः आप मेरी लाज रखों । (3)

हे दयालु देव ! जन्म और मरण के जंजाल में मैंने खूब कठिन कर्म बांधे है ! अब उनसे मै कंटाल चूका हुँ, इससे मुझे मुक्त करो । (4)

आज श्री चौबीसवें श्री महावीर स्वामी मुझ पर प्रसन्न हुए है, इससे मेरा मनोरथ सिद्ध हुआ है, मेरे दुःख-दर्द दूर हुए है एवं मेरा श्रेष्ठ पुण्य उदय में आया है । (5)

हे महावीर स्वामी ! यह आपका शिष्य (पू. उपाध्याय श्री विनयविजयजी) प्रत्येक जन्म में आपके चरणों की भाव भक्ति सेवा को प्राप्त करे, इसलिए प्रार्थना करता है कि दया करके आप प्रसन्न होकर मुझे बोधि बीज प्रदान करे । (6)

**कलश**

तरण-तारण, सद्गति का कारण और दुःख का निवारण करनेवाले श्री वीर जिनेश्वर परमात्मा की जगत् में जय हो ! उनके चरणों की स्तवना करते मेरा मन अधिक खुश हुआ है । (1)

इस जगत् में जंगम तीर्थ के समान, श्री विजय देवसूरीश्वरजी के पट्टधर, तपागच्छाधिपति श्री विजय प्रभसूरीश्वरजी म.सा. आचार्य पद के तेज से प्रकाशित है । (2)

उनके शिष्य वाचक श्री कीर्तिविजयजी जो बृहस्पति के समान है । उनके शिष्य वाचक श्री विनयविजयजी ने इस पुण्य प्रकाश के स्तवन की रचना कर श्री महावीर स्वामी की स्तवना की है । (3)

इस स्तवन की रचना-विक्रम संवत् 1729 में रांदेर नगर के चातुर्मास में विजया दशमी-आसोज सुद-10 के शुभ दिन कर्म शत्रु पर विजय पाने के लिए गुणों के अभ्यास रुप में की है । (4)

मनुष्य जन्म की आराधना, मोक्ष की साधना, सुकृत के विस्तार (लीला के विलास) तथा अपने कर्मों की निर्जरा करने के लिए यह पुण्य प्रकाश का स्तवन रचा है । (5)

प्रवचन प्रभावक परम पूज्य आचार्यदेव श्रीमद् विजय **रत्नसेनसूरीश्वरजी म.सा.**
द्वारा आलेखित 213 पुस्तकों में से प्राप्य हिन्दी भाषा में जैन धर्म का अमूल्य खजाना

| Sr. No. | पुस्तक का नाम | मूल्य |
|---|---|---|
| | **अध्यात्मयोगी पूं.पं.श्री पंन्यासजी म. का साहित्य** | |
| 1. | बीसवी सदी के महान योगी | 300/- |
| 2. | अजातशत्रु अणगार | 100/- |
| 3. | महान् योगी पुरुष | 85/- |
| 4. | आध्यात्मिक पत्र | 60/- |
| 5. | परम-तत्व की साधना भाग-2 | 150/- |
| 6. | परम-तत्व की साधना भाग-3 | 160/- |
| 7. | आत्म-उत्थान का मार्ग-भाग-1 | 125/- |
| 8. | आत्म-उत्थान का मार्ग-भाग-2 | 175/- |
| 9. | आत्म-उत्थान का मार्ग-भाग-3 | 150/- |
| 10. | मंत्राधिराज प्रवचन सार | 80/- |
| | **जैन धर्म का पाठ्यक्रम** | |
| 1. | पर्युषण अष्टाह्निका प्रवचन | 120/- |
| 2. | कल्पसूत्र के हिन्दी प्रवचन | 240/- |
| 3. | पंच-प्रतिक्रमण (भाग-1) | 100/- |
| 4. | पंच-प्रतिक्रमण (भाग-2) | 100/- |
| 5. | पंच-प्रतिक्रमण (भाग-3) | 125/- |
| 6. | पंच-प्रतिक्रमण (भाग-4) | 135/- |
| 7. | जीव विचार विवेचन | 60/- |
| 8. | नव तत्त्व-विवेचन | 60/- |
| 9. | दंडक सूत्र | 50/- |
| 10. | लघु संग्रहणी (जैन भूगोल) | 100/- |
| 11. | तीन भाष्य (चैत्यवंदन भाष्य, गुरुवंदन व पच्चक्खाण) | 150/- |
| 12. | कर्मग्रंथ-पहला | 100/- |
| 13. | कर्मग्रंथ-दूसरा-तीसरा | 70/- |
| 14. | चौथा-कर्मग्रंथ | 55/- |
| 15. | पाँचवाँ-कर्मग्रंथ | 100/- |
| 16. | छठा-कर्मग्रन्थ | 160/- |
| 17. | आओ संस्कृत सीखें भाग-1 | 100/- |
| 18. | आओ संस्कृत सीखें भाग-2 | 220/- |
| 19. | आओ ! प्राकृत सीखें भाग-1 | 125/- |
| 20. | आओ ! प्राकृत सीखें भाग-2 | 85/- |
| 21. | Panch Pratikraman Sootra | 60/- |
| 22. | विवेकी बनो | 90/- |

| Sr. No. | पुस्तक का नाम | मूल्य |
|---|---|---|
| | **वैराग्य पोषक ग्रंथ** | |
| 23. | शांत सुधारस-हिन्दी -भाग-1-2 | 140/- |
| 24. | वैराग्य शतक | 100/- |
| 25. | इन्द्रिय पराजय शतक | 50/- |
| 26. | संबोह-सित्तरि | 70/- |
| | **जीवन-उपयोगी साहित्य** | |
| 27. | जैन-महाभारत | 130/- |
| 28. | श्रावक जीवन दर्शन | 250/- |
| 29. | आग और पानी-भाग-1-2 | 115/- |
| 30. | शत्रुंजय यात्रा (तृतीय आवृत्ति) | 40/- |
| 31. | भक्ति से मुक्ति (पांचवी आवृत्ति) | 40/- |
| 32. | प्रतिक्रमण उपयोगी संग्रह | 80/- |
| 33. | प्रभु दर्शन सुख संपदा | 60/- |
| 34. | श्रावक का गुण सौंदर्य | 125/- |
| 35. | सज्झायों का स्वाध्याय | 35/- |
| 36. | प्रेरक-प्रवचन | 80/- |
| 37. | आओ ! उपधान पौषध करें ! | 55/- |
| 38. | विविध-तपमाला | 100/- |
| 39. | विविध-देववंदन | 60/- |
| 40. | Pearls of Preaching | 60/- |
| 41. | अमृत रस का प्याला | 300/- |
| 42. | बारह चक्रवर्ती | 64/- |
| 43. | संस्मरण | 50/- |
| 44. | Celibacy | 70/- |
| 45. | रत्न-संदेश-भाग-1 | 150/- |
| 46. | रत्न-संदेश-भाग-2 | 150/- |
| 47. | आओ ! दुर्ध्यान छोड़े !! भाग-2 | 70/- |
| 48. | श्रीपाल-रास और जीवन-चरित्र | 160/- |
| 49. | श्रमण-क्रिया के मुख्य सूत्र | 200/- |
| 50. | मोक्ष-मार्ग के कदम | 120/- |
| 51. | शंका-समाधान (भाग-4) | 60/- |
| 52. | व्यसन-मुक्ति | 100/- |
| 53. | गणधर-संवाद | 80/- |
| 54. | समाधि मृत्यु | 80/- |
| 55. | New Message for a New Day (प्रेस में) | 600/- |

**Shubhay 98338 35899**